अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का आलोचनात्मक अध्ययन

(एम॰ फिल॰ उपाधि हेतु लघु शोध-प्रबंध)

शोध निर्देशक
डॉ॰ गोबिन्द प्रसाद

शोधार्थिनी
मीनेश शर्मा

भारतीय भाषा केन्द्र

भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय

नई दिल्ली - 110 067

1998

21.7.98

जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय
JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
NEW DELHI - 110067

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि कु० मीनेश शर्मा द्वारा प्रस्तुत लघु शोध-प्रबंध ''अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का आलोचनात्मक अध्ययन'' में प्रयुक्त सामग्री का इस विश्वविद्यालय अथवा किसी अन्य विश्वविद्यालय में इसके पूर्व किसी भी प्रदेय उपाधि के लिये उपयोग नहीं किया गया है।

यह लघु शोध - प्रबंध कु० मीनेश शर्मा की मौलिक कृति है।

अध्यक्ष
भारतीय भाषा केंद्र
भाषा, साहित्य एवं संस्कृति
अध्ययन संस्थान
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - ६७

डॉ० गोबिंद प्रसाद
निर्देशक
भारतीय भाषा केंद्र
भाषा, साहित्य एव संस्कृति
अध्ययन संस्थान
जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली - ६७

भाषा, साहित्य एंव संस्कृति अध्ययन संस्थान
भारतीय भाषा केंद्र
जवाहरलाल नेहरू वि० वि०
नई दिल्ली -६७
१९९८

GRAM : JAYENU TEL. : 667676, 667557 TELEX : 031-73167 JNU IN

विषयानुक्रम

			पृष्ठ संख्या
भूमिका		.....	1 - 9
प्रथम अध्याय	:	ग़ज़ल का सफ़रनामा	10 - 28
द्वितीय अध्याय	:	ग़ज़ल हिंदी में	29 - 43
तृतीय अध्याय	:	ग़ज़ल का आधुनिक सन्दर्भ और अदम गोण्डवी	44 - 70
चतुर्थ अध्याय	:	अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का शिल्प	71 - 90
उपसंहार		.....	91 - 96
आधार सामग्री		.....	97 - 98
परिशिष्ट		.....	i - vi

*****

''अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का आलोचनात्मक अध्ययन''

- भूमिका -

ग़ालिब अपने शिल्प की सीमाओं से असंतुष्टि ज़ाहिर करते हैं-

"वक़द्रे - शौक़ नहीं ज़र्फ़ें तंगहा है ग़ज़ल
कुछ और चाहिये वुसअत मेरे बयाँ के लिये''

ऐसा मालूम होता है कि शायर की अभिव्यक्ति किसी कूज़े में फँस गई है और छटपटा रही है। अपने विस्तार की चाह करती है। ग़ज़ल के तयशुदा फ्रेम, सख़्त काव्य बंधनों, निर्धारित विषयों में शायर अपनी बात नहीं व्यक्त कर पा रहा है, मुक्ति की कामना करता है। एक ज़माने तक ग़ज़ल इतनी ही सख़्त पाबंद और निर्धारित ढर्रे पर थी। ग़ज़ल आम लोगों के लिये, आम बातों के लिये नहीं थी। फ़ारस से जब यह विदेशी काव्य सुन्दरी हिंदुस्तान में आई तो इसे जनसाधारण में नही राज-दरबारों में जगह मिली और राज-दरबारों में भी रसिकों के कण्ठों में विराजती थी। इसीलिये ग़ज़ल में भी अन्य आम विषयों को नहीं, जगह मिली हुस्नो - इश्क़ को।

राजा - नवाब लोग तीतर बटेर लड़ाते थे, साक़ी - शराब -ऐश्वर्य में डूबे रहते थे, सुरा-सुन्दरी के दौर चलते थे और साथ चलती थी ग़ज़ल। शौक़ीनों के प्रेम की रसीली अभिव्यक्ति 'ग़ज़ल'।

वो ग़ज़ल के आरंभिक दिन थे, जब ग़ज़ल हुस्नों-इश्क़, गुलो-बुलबुल, साक़ी - साग़र तक ही सीमित थी । ग़ज़ल के इसी रूप [illegible] ग़ज़ल [illegible]

को ध्यान में रखकर माजदा असद ग़ज़ल का परिचय इन शब्दों में करवाती हैं - "एक भरेपूरे परिवार में बच्चों और बूढ़ो के बीच जो स्थान एक अलबेली सुन्दरी का होता है वही स्थान ग़ज़ल का अन्य काव्य विधाओं के बीच है।" (1)

लेकिन अब के शायरों ने इस अलबेली सुन्दरी को ख़ाली इठलाने के लिये ही नहीं छोड़ा है, अब यह एक ज़िम्मेदार सुन्दरी का रोल निबाह रही है -

जो ग़ज़ल माशूक़ के जल्वों से वाकिफ़ हो गई
उसको अब बेवा के माथे की शिकन तक ले चलो।

- अदम गोण्डवी

जब ग़ज़ल ने माशूक़ की चूड़ियाँ गिनना छोड़ कर बेवा के माथे की शिकनें गिनना शुरू किया तो सारा हिसाब किताब ही बदल गया और इतना बदला कि ग़ज़ल की जिस तंगदस्ती से ग़ालिब दुखी थे वह दूर-दूर तक ख़त्म हो गई। ग़ज़ल के लिये आधुनिक सन्दर्भों के आयाम खुल गये। आज ग़ज़ल साहित्य की एक जीवंत काव्य विधा है। जो आंतरिक सौन्दर्य-बोध के साथ-साथ युग-सत्य भी वहन करती है। उल्लेखनीय यह है कि यह परिवर्तन ग़ज़ल की नाज़ुक मिज़ाजी को बरक़रार रख कर हुआ। ग़ज़ल के फ़ॉर्म यानि मतला - मक़ता की स्थिति शेर, रदीफ़, काफ़िया सब बरक़रार रहे सिर्फ़ ग़ज़ल का स्वर बदला , स्वरूप नहीं, जिसे कहते हैं ग़ज़ल की 'ग़ज़लियत' वह नहीं छूटी। लेकिन तौर - तरीक़ों में ज़रा सा हेर-फेर हुआ-

ज़रा सा तौर-तरीकों मे हेर-फेर करो
तुम्हारे हाथ में कॉलर हो आस्तीन नहीं (2)

- दुष्यंत कुमार

फ़ारसी ग़ज़ल से हिन्दुस्तानी ग़ज़ल तथा फिर हिंदी ग़ज़ल तक विकास यात्रा में यही परिवर्तन (प्रतीकात्मक रूप से कहें तो) मुख्य है कि ग़ज़ल में आस्तीन पकड़ने की प्रवृत्ति की जगह कॉलर थामने की आदत आ गई यानि अलबेली सुन्दरी ज़िम्मेदार और आत्म निर्भर हो गई।

आरंभ में ग़ज़ल हिन्दुस्तान के जनजीवन से नहीं जुड़ी थी। विषय प्रतीक विचारधारा सब फ़ारसी से ही प्रभावित थे। इससे भारतीय परिवेश में ग़ज़ल आयातित लगती थी इसमें विदेशीपन की बू आती थी। इस विदेशीपन को कम करने के लिये भारतीय शायरों ने ग़ज़ल में भारतीय संस्कृति के रंग भरने शुरू किये। ये प्रयास दकन के कुली कुतुबशाह वली, वजही इत्यादि से लेकर दिल्ली के शायरों मीर, दर्द, सौदा, ग़ालिब सभी के यहां देखने को मिलते हैं, विशेषकर मीर के यहां ! मीर ने ग़ज़ल को भारतीय संस्कृति के रंग में इतना गहरे उतारा कि, मीर की ग़ज़लों को तो भारतीय संस्कृति का विश्वविद्यालय तक कहा गया (फ़िराक,उर्दू भाषा और साहित्य पृ॰ ३०)

मीर के दीनों-मज़हब को अब पूछते क्या हो उनने तो
कश्का खौंचा, दैर में बैठा, कब का तर्क इस्लाम किया

मीर (3)

सावन के बादलों की तरह से भरे हुऐ,
ये वो नयन हैं जिनसे कि जंगल हरे हुए

सौदा (4)

परवर्ती शायरों में नज़ीर अकबराबादी, अकबर इलाहाबादी जैसे शायरों ने ग़ज़ल को उच्च भाव - भूमि से उतार कर आम जनता से जोड़ा।इस सन्दर्भ में मौलाना हाली का नाम भी विस्मरण योग्य नहीं है। साहित्य की समाज से समीपता पर उन्होंने बहुत ज़ोर दिया इस तरह धीरे - धीरे विषय की दृष्टि से ग़ज़ल का दायरा विस्तृत होने लगा। आज राजनीति, समाज, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय मुद्दे सभी विषयों पर ग़ज़लें लिखी जा रही हैं। ग़ज़ल ने विलासिता छोड़ कर जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं पर ध्यान देना शुरू कर दिया है।

अब मर्कज़ में रोटी है, मुहब्बत हाशिये पर है
उतर आई ग़ज़ल इस दौर में कोठी के ज़ीने से। (5)

- अदम गोण्डवी

शायर का रूख ग़मे - जाना से ग़मे - ज़माना की तरफ हो गया। वक्त की जरूरत साहित्य ने समझी। दुष्यंत कुमार ने ग़ज़लों के लिये आधुनिक सन्दर्भों के आयाम खोले। अदम गोण्डवी भी दुष्यंत की ही परम्परा के शायर हैं। जनवादी शायरी के लिये जाने पहचाने जाने वाला यह शायर बाग़-बाग़ीचों में घूम कर शायरी का मूड जुटाने वाला शायर नहीं हैं। अदम गोण्डवी खुद ज़मीन से जुड़े हुऐ हैं, हल से खेती करते हैं, गाँव में रहते हैं, अल्पशिक्षित हैं, और

अल्प शिक्षितों के बीच ही बसते हैं। इसलिये इनकी शायरी ज़िंदा शायरी है, काल्पनिक नहीं । वर्तमान शायरों में अदम गोण्डवी का स्थान बिल्कुल अलग है । इसलिये मैंने अपने लघु शोधप्रबंध में इन पर काम करने का निर्णय लिया। युवा पीढ़ी इनकी शायरी से उसी प्रकार प्रेरणा ले सकती है जैसे स्वतंत्रता संग्राम में युवक वंदे मातरम् से प्रेरणा लिया करते थे।

साहित्य की अन्य काव्य विधाओं पर असंख्य शोधकार्य हुए हैं किन्तु हिंदी ग़ज़ल पर अधिक कार्य नहीं हुआ है। जबकि हिंदी में अच्छी ग़ज़लें आ रही हैं, ग़ज़ल की पुस्तकों और ग़ज़लकारों की सूची भी संक्षिप्त नहीं है लेकिन शोध - प्रबंधं और शोध-पत्र अगर मिलते हैं तो ले दे कर वही सिर्फ़ दुष्यंत कुमार पर ।

१९८७ में डॉ॰ रोहिताश्व अस्थाना का शोधप्रबंध हिंदी ग़ज़ल पर आया था। डॉ॰ कुँअर बेचैन की पुस्तक ''शामियाने कांच के'' की भूमिका में भी हिंदी ग़ज़ल पर प्रकाश डाला गया है। सागर मिर्ज़ापुरी की पुस्तक ''ग़ज़लपुर'' भी हिंदी ग़ज़ल पर लिखी गई है। कुछेक अन्य पुस्तकों के अलावा समय - समय पर पत्र-पत्रिकाओं में लेख देखने को मिलते रहते हैं। हिंदी ग़ज़ल आज सतत् विकास की प्रक्रिया में है। अदम गोण्डवी जी समकालीन शायरों में एक प्रमुख व्यक्तित्व हैं। इनकी ४७ ग़ज़लें जो 'धरती की सतह पर' में प्रकाशित हैं का मैंने आलोचनात्मक अध्ययन करने की कोशिश की है। इन ग़ज़लों के माध्यम से हिंदी ग़ज़ल की वर्तमान स्थिति, दशा और दिशा का मूल्यांकन करने की भी कोशिश इस लघु शोधप्रबंध में की है।

प्रस्तावना तथा उपसंहार के अतिरिक्त पूरे लघु शोध-प्रबंध को ४ अध्यायों में वांटा गया है।

पहले अध्याय का शीर्षक है 'ग़ज़ल का सफ़रनामा'। इसमें ग़ज़ल की विकास यात्रा दिखाई है। चूंकि ग़ज़ल विदेशी विधा है, अतः इसके सफ़र का प्रारंभ तथा हिंदुस्तान में विस्तार इत्यादि पर इस अध्याय में प्रकाश डाला है। इस अध्याय में मैंने ग़ज़ल शब्द की व्युत्पत्ति तथा ग़ज़ल विधा का उद्भव दोनों के उत्स ढूंढने की कोशिश की है।

मुख्यतः इस अध्याय में मैंने यह दिखाना चाहा है कि ग़ज़ल ने अपने जन्म से लेकर विकासावस्था तक कैसे सफ़र किया अरब के क़सीदे से जन्म लेकर ग़जल फ़ारसी तथा उर्दू के रास्ते तय कर किस प्रकार हिंदी तक आई। द्वितीय अध्याय है —'ग़ज़ल हिंदी में' ग़ज़ल हिंदी में कैसे आई। हिंदी ग़ज़ल जिसे कहते हैं वह उर्दू ग़ज़ल का लिप्यान्तरण मात्र नहीं है। भाषा के अलावा वोध के स्तर पर भी हिंदी ग़ज़ल अपनी अलग पहचान रखती है इस अध्याय में हिंदी ग़ज़ल के क्रमिक विकास पर विचार किया गया है। हिंदी में ग़ज़ल की शुरूआत अमीर खुसरो से हुई थी। इनसे शुरू करके इसी विकास क्रम के अतंर्गत कबीर, भारतेन्दु युगीन तथा छायावाद के कुछ प्रमुख ग़ज़लकारों से लेकर आधुनिक ग़ज़लकार शमशेर, त्रिलोचन, सूर्यभानुगुप्त, कुँअर बेचैन, अशोक अंजुम, अदमगोण्डवी इत्यादि को अध्ययन का केंद्र बनाया है।

तीसरे अध्याय में 'हिंदी ग़ज़ल का आधुनिक सन्दर्भ तथा अदम गोण्डवी' : हिंदी ग़ज़ल की विशेषताओं को दर्शाया गया है। उर्दू

फ़ारसी ग़ज़ल अपनी कोमलता, माधुर्य और संगीतात्मकता से लोगों को ग्राह्य हो जाती है जबकि हिंदी ग़ज़ल समसामयिक जन चेतना से जुड़ कर जनमानस से भाव-तादात्म्य स्थापित करने में सक्षम है। न केवल शिल्प की दृष्टि से बल्कि कथ्य, विषय - चयन,भाव-बोध की भूमि पर भी हिंदी ग़ज़ल एक सर्वथा भिन्न प्रकार की काव्य-विधा है। इस अध्याय में मैंने ग़ज़ल के आधुनिक सन्दर्भ में समकालीन रचनाकारों की रचनाओं के साथ अदम गोण्डवी की ग़ज़लों की मूल स्वर-संवेदना की पड़ताल की है। इन की ग़ज़लों की व्यक्तिगत विशेषताओं पर प्रकाश डाला है तथा कथ्य एवं संदेश पर मनन किया है। यही इस शोध प्रंबध का मूल प्रयोजन भी है।

चौथे अध्याय "अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का शिल्प" में इनकी ग़ज़लों की कलात्मक या रूपात्मक आलोचना करने की कोशिश की गई है। इस अध्याय में भाषा, उपमान, प्रतीकीकरण, रूपगठन, शैली इत्यादि के स्तर पर ग़ज़लों का अध्ययन किया गया है।

अपने शोधप्रबंध में मैंने अदम गोण्डवी की ग़ज़लों के माध्यम से वर्तमान समय में ग़ज़ल के बदलते स्वरूप की प्रासंगिकता और सफलता का अध्ययन किया है। साथ ही पहले दो अध्यायों में ग़ज़ल विधा पर भी प्रकाश डाला गया है। उम्मीद है यह लघु शोध-प्रबंध किसी हद तक शायर की ग़ज़लों की सही आलोचना कर पाने में समर्थ होगा।

मैं काफ़ी हद तक आशान्वित हूँ कि मेरा यह लघु शोध प्रबंध पूर्णतः सत्य एंव सटीक तथ्यों पर आधारित है क्योंकि मेरे शोध

निर्देशक डॉ० गोबिंद प्रसाद स्वयं भी एक अच्छे कवि हैं तथा ग़ज़ल की बारीकियों से खूब परिचित हैं। अतः इनके निर्देशन में मैंने निश्शंक होकर काम किया।

श्री रामनाथ सिंह अंदम की मैं हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने समय-समय पर अपने पत्रों से मेरा उत्साहवर्धन किया।

श्री आर. के. शर्मा 'डिप्टी डायरेक्टर नेशनल हॉर्टीकल्चर बोर्ड' का भी मैं हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने अध्ययन में मेरी मदद की तथा अपना अमूल्य समय और सहयोग प्रदान किया।

और अंत में यद्यपि दोस्तों को धन्यवाद नहीं दिया जाता फिर भी मैं मानती हूँ कि मेरे सहपाठी मित्र सारस और जामिया मिल्लिया की मेरी मित्र समीना ने अध्ययनेतर विषयों में मेरी मदद की जिसके कारण मेरे लिए अध्ययन करना सुगम हो सका।

मीनेश शर्मा

मीनेश

संदर्भ

1. माजदा असद - संपादकीय, सापेक्ष 32 ग़ज़ल विशेषांक से उद्धृत.

2. दुष्यंत कुमार - साये में धूप, पृ.-62.

3. मीर - दीवाने-मीर, राजकमल प्रकाशन, पृ.-11.

4. सौदा - दीवाने-मीर, राजकमल प्रकाशन, पृ.-15.

5. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर, ग़ज़ल सं.-23.

ग़ज़ल का सफ़रनामा

हज़ार साल से भी ज्यादा पुरानी काव्य - विधा ग़ज़ल अपनी नाज़ुक ख़यालो और खूबसूरत अंदाज़े- बयाँ के कारण आज भी उतनी ही नवीनता लिये हुए है। चिरयुवा ग़ज़ल का शाब्दिक अर्थ ही है आशिक़ और माशूक़ा की मुहब्बत भरी गुफ़्तगू ! यह प्रेम अभिव्यक्ति की कविता है, प्रेम की गहनता के समान ही ग़ज़ल में भी गहराई मिलती है। फ़िराक़ ने ग़ज़ल को ''सीरिज़ ऑफ क्लाइमेक्सेज़'' कहा है, यानि इसका हर शेर अपने अर्थ एवं भाव में 'क्लाइमेक्स' पर होता है, हर शेर मे भिन्न स्वतंत्र चिंतन।

'ग़ज़ल' शब्द की उत्पत्ति 'ग़ज़ाला' से मानी जाती है। तीर चुभने के बाद ग़ज़ाला की जो कराह निकलती है, वही ग़ज़ल है। फ़ारसी में ग़ज़ल शब्द के मानी है- 'औरतों से बातें करना (विज़दान गुफ़्तगूं करदन)[1] इस अर्थ में ग़ज़ल का तात्पर्य लगाया जाता है 'प्रेमिका से बातचीत करना'। ग़ज़ल का एक अन्य अर्थ है इश्क़ का ज़िक्र। अरबी में ग़ज़ल शब्द का अर्थ कातना बुनना भी होता है। यानि ग़ज़ल के विभिन्न अर्थों से भी यही ध्वनि निकलती है कि ग़ज़ल में प्रेम एवं नाजुक मिज़ाजी रहती है। वाकई ग़ज़ल एक नाजुक विधा है जिसमें भावों की बारीक कताई बुनाई रहती है। सूक्ष्मता संकेत एवं संक्षिप्तता ग़ज़ल के शेरों की विशेषता है स्थूलता, फैलाव या सपाटबयानी यहां दरकार नहीं। ग़ज़ल का बुनियादी अंग ही जज़्बा है।

ग़ज़ल लेखन की शुरूआत कैसे हुई यह भी विवाद युक्त विषय है। कुछ विद्वान बताते हैं कि अरब में एक 'ग़ज़ल' नामक कवि था, जिसकी कविताओं में सिर्फ़ प्रेम ही हुआ करता था। उसने अपनी सारी उम्र शराब पीने और मस्ती में गुज़ार दी थी अतः उसकी मिसाल से जोड़कर प्रेमपरक

कविताएं ग़ज़ल ही कहलाई जाने लगीं। वैसे यह भी सर्वविदित है कि ग़ज़ल की उत्पत्ति क़सीदे से हुई। क़सीदे का आरम्भिक भाग तश्बीब कहलाता था। इसमें सौन्दर्य एवं प्रेम का चित्रण मिलता था इस भाग को क़सीदे से अलग करके एक नई काव्य विधा ग़ज़ल ली गई । इस प्रकार क़सीदे के उत्थान एंव विकास के साथ ही उसके गर्भ मे ग़ज़ल पनप रही थी।

अरब से क़सीदा फारस गया यहीं पर ग़ज़ल का क़सीदे से पृथक्करण हुआ। एक स्वतंत्र रूप ग़ज़ल को मिला। रौदकी ईरान के प्रथम ग़ज़लकार माने जाते हैं। इस प्रकार ग़ज़ल का आरंभ ईरान में हुआ।

आरंभिक फ़ारसी ग़ज़ल के विषय सौन्दर्य और प्रेम ही रहे। साथ ही शराब, साक़ी, पैमाना यही सब चलता रहा। ग़ज़ल विषयासक्ति और विलासिता की कविता बन गई। ग़ज़ल को इससे बचाया सूफ़ी मत ने। सूफ़ी प्रभावों से ग़ज़ल का रूख दैहिक से दैविक की ओर हो गया, सौन्दर्य की प्रशंसा, प्रेम की आराधना तो ग़ज़ल में रही, किंतु अब ग़ज़ल के द्वार नीति एवं दार्शनिक विषयों के लिये भी खुल गए। सूफ़ी प्रभावों के कारण ग़ज़ल में सिर्फ़ प्रेमिका को ही नही परमात्मा को भी याद किया जाने लगा। इससे न केवल विषयों का विस्तार हुआ बल्कि भाषा भी परिष्कृत हुई। जिससे ग़ज़ल मात्र कोमलकांत पदावली युक्त नाज़ुक कविता ही नहीं रही बल्कि सुन्दर और कोमल भावों को अर्थपूर्ण ढंग से स्पष्ट भी करने लगी।

यद्यपि ग़ज़ल को अपने आरंभ से इस उच्च स्तर तक पहुँचने में ५०० वर्ष लगे थे, किंतु इस अरसे में फ़ारसी ग़ज़ल ने दर्शन, राजनीति, सामाजिक सभी क्षेत्रों को स्पर्श किया, बल्कि ग़ज़ल में वह सब कुछ समाहित है जो इस समय जीवन में समाहित था। फ़ारसी के प्रथम कवि रौदकी से लेकर ग़ज़ल के प्रथम उन्नायक सादी शीराज़ी तक सभी के यहां

ग़ज़लें देखने को मिलती हैं। ग़ज़ल ने फ़ारसी साहित्य में अपनी वह जगह बना ली कि आज फ़ारसी साहित्य में इसके मुकाबले की कोई कविता ही नहीं है।

इसके बाद ग़ज़ल हिंदुस्तान आई। फ़ारसी में ग़ज़ल अपना स्वरूप अख़्तियार कर चुकी थी अतः उर्दू को यह बनी बनाई मिली। इस बात को सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है '' ईरानी काव्य की यह प्रेममय काव्य-विधा भाव और कला दोनों आधारों पर अपने में पूर्ण थी। उर्दू को अपने इसी पूर्ण रूप में प्राप्त हुई'' (शेर-उल-अज़्म, मौलाना शिब्ली नोमानी, पृ. ४४) "उर्दू ग़ज़ल को विरसे में फ़ारसी ग़ज़ल की शानदार परम्परा मिली थी।जिसकी उम्र ५०० वर्ष से अधिक थी" (सरदार जाफ़री, दीवाने मीर की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, पृ० १८) "वह विधा जो हमें ईरान से मिली भाव व कला दोनों स्थितियों में पूर्ण थी और ये दोनों स्थितियां उर्दू के प्रयोग में आईं"। (ग़ज़ल और दरसे-ग़ज़ल, अख़्तर अंसारी, पृ० ६)

इस प्रकार हिंदुस्तान में ग़ज़ल फ़ारसी से उत्तराधिकार के रूप में उर्दू को मिल गई। उर्दू को इसलिये मिल गई क्योंकि यह मुसलमानों के साथ आई थी लिपि अरबी थी एवं विषय, प्रतीक, मुहावरे भी इस्लामिक थे। इस तरह उर्दू को बनी बनाई काव्य-विधा उपहार के रूप में मिली जिसने बाद में समय, परिस्थितियों एवं मान्यताओं के अनुरूप स्वयं को ढाला, परिवर्तन किये।

उर्दू की उत्पति दकन में हुई।उर्दू की अन्य विधाओं की तरह उर्दू ग़ज़ल भी दकन से शुरू हुई। कुछ सांस्कृतिक और राजनैतिक कारणों से जिस समय उत्तर भारत में उर्दू बाज़ारी बोली से ज़्यादा महत्त्व न रखती

थी उस समय दक्षिण में वह सांस्कृतिक माध्यम के रूप में प्रतिष्ठापित हो गई थी "बहमनी राज्य के अंत के साथ दक्षिण में ५ राज्य क़ायम हो गये। इनमें साहित्य और संस्कृति के उत्थान के विचार से बीजापुर का आदिलशाही वंश और गोलकुण्डा का कुतुबशाही वंश प्रसिद्ध रहा और इन्हीं दोनों राजवंशों के काल में दक्षिण में उर्दू की प्रारंभिक उन्नति हुई"[२]। (उर्दू भाषा और साहित्य, फ़िराक़, पृ. ३)

१७वीं शता. में गोलकुण्डा का दरबार साहित्यिक उन्नति के लिए बराबर प्रसिद्ध रहा। इस वंश के बादशाह स्वयं कवि तथा कवियों के संरक्षक थे। मु० कुली कुतुब शाह मआनी इस वंश में सबसे प्रसिद्ध शायर रहे। इनका शासन १५८०-१६११ ई. तक रहा था। दक्षिणी उर्दू तथा फ़ारसी के अलावा तेलुगू में भी कविता करते थे। तेलुगू में इनका उपनाम तुर्कमान था। इनकी माँ तेलंगाना की रहने वाली थीं। इनका महत्त्व इस बात में हैं कि इन्होंने दकनी को फ़ारसी से बिल्कुल मुक्त कर दिया। फ़ारसी से प्रभावित शायरी को इन्होंने हिंदी ज़मीन दी। फ़िराक़ गोरखपुरी कुली कुतुबशाह के बारें में लिखते हैं "विषय के लिहाज़ से उर्दू काव्य के विकास में सुल्तान कुली कुतुबशाह की कविताओं का विशेष महत्त्व है। इससे पहले जो उर्दू कविताएँ मिलती हैं वे सूफ़ी सिद्धांतों का प्रतिपादन मात्र हैं उनमें न स्वाधीन अभिव्यक्ति है न विषयबाहुल्य इसलिये उनका केवल ऐतिहासिक महत्त्व है। इसके विपरीत सुल्तान मुहम्मद कुली कुतुबशाह की रचनाओं को वास्तविक अर्थों में साहित्यिक कोटि में रखा जा सकता है। इसके कारण नि. लि. हैं सबसे पहली बात तो यह है कि उन्होंने दकनी को फ़ारसी के प्रभाव से बिल्कुल मुक्त कर दिया। उन्होंने हिंदी का बहुत प्रभाव लिया हिंदी के रूपकों और उपमाओं का प्रयोग किया, फ़ारसी शब्दों को भी हिंदी रूप दे दिया और स्त्री की ओर से पुरूष के प्रति

प्रेम - प्रदर्शन का आधार लिया जो कि हिंदी काव्य की विशेषता है।हिंदी शब्दों का भी उन्होंनें खुलकर प्रयोग किया है।"(३) सैयद ऐहतेशाम हुसैन ने कुली कुतुबशाह के बारे में लिखा है ''उर्दू का वह पहिला कवि है जिसके प्रति निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उसने भारतवर्ष के जीवन में डूबकर कविताएँ लिखीं।जिस प्रकार उसे मुसलमानों के त्योहारों, ईद, शबरात इत्यादि से प्रेम है उसी प्रकार वह बसंत दीवाली और होली के मनोरंजनों में भी भाव-पूर्वक सम्मिलित होता है। उसकी कविताएँ स्थानीय रंग में इतनी डूबी हुई हैं कि उस संग्रह से उस समय के धर्म-विचार, रहन- सहन, आमोद-प्रमोद और जीवन की अन्य समस्याओं के बारे में बहुत कुछ ज्ञात हो सकता है"। (४)

पिया बाज पियाला पिया जाए ना।
पिया बाज यक तिल जिया जाए ना।।
नहीं इश्क जिसको बड़ा कोर है।
कधीं उससे मिल बैसिया जाए ना।

ooo ooo

रख एक है पर एक कधन लाख चमन है
लख जोत है हर ठार वले एक रतन है
मुज इश्क आग का एक चिनगी है सूरज ·
इस आग के शोले का धुवां सात गगन है।

सुल्तान मुहम्मद कुतुबशाह - कुली कुतुबशाह के भतीजे दामाद तथा उत्तराधिकारी मु० कुतुबशाह स्वयं एक बड़े शायर थे।इनके दो दीवान हैं एक फ़ारसी में दूसरा दकनी उर्दू में।इनकी कविता भी स्थानीय रंग और उपमाओं से भरी हुई है।

सखी तू हर घड़ी मुझ पर न कर ग़ैज़
मुहब्बत पर नज़र रखकर बिसर ग़ैज़

कविताओं में इनका उपनाम ''ज़िल्लुल्लाह'' था। इनका पुत्र अब्दुल्लाह कुतुबशाह भी कवि था।

तेरी पेशानी पर टीका झमकता
तमाशा है उजाले में उजाला

इनके दरबार में उस समय कई प्रमुख कवि थे कुत्बी, इब्ने-निशाती, मुल्ला वजही आदि। औरंगज़ेब ने १६८० ई॰ में शिवाजी के मरने पर चढ़ाई की और १६८६ ई॰ में बीजापुर तथा १६८७ ई॰ में गोलकुण्डा को मुग़ल साम्राज्य में मिला लिया।इस प्रकार इन दोनों स्थानों से साहित्य के केंद्र उठ गये किंतु शाही सदर मक़ाम होने के कारण यह केंद्र अब औरंगाबाद हो गया, और वहां पर दक्षिण के कवियों का जमाव होने लगा। वली, सिराज, दाऊद खाँ दाऊद, बहरी, आरिफुद्दीन आजिज़, उज़लत आदि औरंगाबाद के प्रमुख कवि हुए हैं। ग़ज़ल की भाषा एवं शैली के विकास में औरंगाबाद काल दकनी उर्दू तथा उत्तरी भारत की उर्दू के बीच की कड़ी माना जाता है। इन कवियों की रचनाओं में दिल्ली के कवियों की अपेक्षा दकनीपन अधिक है और कुतुबशाही तथा आदिलशाही कवियों की अपेक्षा भाषाका सुथराव तथा फ़ारसीपन की प्रवृत्ति अधिक है"।[५]

वली- वली को उर्दू कविता का बाबा आदम कहा जाता है। "वह दक्षिण के सबसे बड़े कवि थे तथा उन्हीं की ज्योति से उत्तरी भारत में भी उर्दू कविता के दीप जले।"[६] वली ने सरल तथा बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया। "वली की कविताएँ देखकर दिल्ली के कवियों को अनुभव हुआ कि

अपनी भाषा में कविताएँ लिखना मनोरंजक और सफल सिद्ध हो सकता है।"[७] "वली ने अपनी ग़ज़लों में अधिकतर प्रेम की भावना का वर्णन विभिन्न रूपों से किया है यह प्रेम भावना व्यापक होकर सूफ़ी मत के प्रेम का रूप ग्रहण कर लेती है। इसलिये वली की ग़ज़लों मे गूढ़ता के साथ-साथ एक सच्चे प्रेमी की वास्तविक कल्पनाएँ भी दीख पड़ती हैं"। [८]

जिसे इश्क़ का तीर कारी लगे
उसे ज़िंदगी क्यों न भारी लगे
सजन तुम मुख सेती खोलो नक़ाब आहिस्ता-आहिस्ता
कि ज्यों गुल से निकलता है गुलाब आहिस्ता -आहिस्ता
हज़ारों लाख खूबाँ में सजन मेरा यूं चले
सितारों में चले ज्यों महताब आहिस्ता-आहिस्ता।

काज़ी महमूद बहरी - ये भी बड़े सूफ़ी कवि थे। इनकी ग़ज़लों की भाषा सरल और सादी है।

सूर तुज मुख मिसाल नै सच है
लाल तुज लब से लाल नै सच है
अब ख़ुशामद तु बस कर ऐ बहरी
तुज पर उसका ख़्याल नै सच है।

सिराज - इनका नाम सिराजुद्दीन सिराज था "वली की भांति सिराज की रचनाएं भी साफ सुथरी और सरल हैं। उनमें न भारी भरकम शब्द जाल है न द्वयर्थकों का आडंबर न अंधाधुध अलंकारों का प्रयोग। सफाई और सादगी ने वर्णन में ज़बरदस्त प्रवाह पैदा कर दिया है।..... दकन में वली के लगाऐ हुऐ उर्दू काव्य के पौधे की सिंचाई और साज-सवाँर करने वाले सिराज ही है।" [९]

ख़बरे- तहय्युरे - इश्क़ सुन न जुनूँ रहा न परी रही
न तो तू रहा न तो मैं रहा जो रही सो बेख़बरी रही

ooo ooo ooo

मुद्दत से गुम हुआ दिले-बेगाना-ए-सिराज
शायद कि जा लगा है किसी आशना के हाथ

दक्षिण भारत से ग़ज़ल दिल्ली पहुँची । दिल्ली में फ़ारसी का बोलबाला था। उर्दू आम जनसाधारण की महत्त्वहीन ज़ुबान थी। १८वीं शताब्दी के आरंभमेंजब वली का दिल्ली आगमन हुआ तब वली की कविता से दिल्ली वालों मे उर्दू कविता के प्रति रूचि पैदा हुई, और उन्हें यह ज्ञात हुआ कि सांस्कृतिक - परिष्कृत जुबान ही साहित्य की जुबान हो यह जरूरी नहीं। आम जनता की भाषा में भी कविता हो सकती है। "वली के कारण दिल्ली वालों में उर्दू कविता के प्रति रूचि पैदा हुई इसके पूर्व साहित्यिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में फ़ारसी का बोलबाला था और उर्दू को साधारण बोलचाल की भाषा से अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था। साहित्य -सर्जन के लिये उर्दू को गंभीरतापूर्वक माध्यम बनाने की रूचि दिल्ली में १८वीं शता. से दिखाई देती है।" (१०) दिल्ली के शायरों में मुहम्मद शाकिर नाजी, शरफुद्दीन मज़मून यकरंग, ख़ान आरज़ू , अशरफ़ अली ख़ाँ 'फुँगा', शाह हातिम आबरू , मिर्ज़ा मज़हर जाने-जां, फ़ाइज़, ताँबा आदि हुए। इन कवियों के बारे में फ़िराक़ गोरखपुरी लिखते हैं कि "इन कवियों ने शाब्दिक अनुरूपता और द्वयर्थियों का ज़ोर कम करके भाषा को सरल, प्रवाहमय और प्रांजल बना दिया।" (उर्दू भाषा और साहित्य पृ.१७)

उस रूख़े-रोशन की जो कोई याद में मशगूल है
मेह उसके रूबरू सूरजमुखी का फूल है

नाजी

आता है हर सहर उठ तेरी बराबरी को
क्या दिन लगे हैं देखो ख़ुर्शीदे-ख़ावरी को

आरजू

इन कवियों ने उर्दू ग़ज़ल को वह सुदृढ़ पीठि प्रदान की जिस पर बाद में आने वाले कवियों ने ग़ज़ल को अपूर्व ऊचाँइयों तक खड़ा कर दिया। इन कवियों में मीर तक़ी मीर, सौदा, मीर दर्द, मीर सोज़, मिर्जा रफ़ी उल्ला, ज़ौक, शेफ्ता, मोमिन, ग़ालिब आदि थे।

ऐहतेशाम हुसैन लिखते हैं "जिन कवियों ने उर्दू ग़ज़ल को ग़ज़ल बनाया उनमें दर्द, सौदा और मीर सर्वश्रेष्ठ हैं।" (११)

दर्द की अधिकतर ग़ज़लें छोटी बहरों में हैं।मौलाना मुहम्मद हुसैन आज़ाद ने उनकी तुलना नश्तरों की तेज़ी से की है।

जग में आकर इधर-उधर देखा
वही आया नज़र जिधर देखा
उन लबों ने न की मसीहाई
हम ने सौ-सौ तरह से मर देखा

सौदा - ये उर्दू के प्रमुख क़सीदा कार माने जाते हैं।यह बात मशहूर हो गई थी कि सौदा जिस कोटि के क़सीदे जिखते है वैसी ग़ज़ल नहीं लिख पाते इसलिये उन्होंने कहा-

लोग कहते हैं कि सौदा का क़सीदा है ख़ूब
उनकी ख़िदमत के लिये मैं यह ग़ज़ल गाऊंगा।

सौदा की शायरी से स्पष्ट होता है कि इस समय तक उर्दू भाषा दक्षिण के प्रभाव से दूर हो चुकी थीं और फ़ारसी शब्दों का प्रयोग बढ़ रहा

था साथ ही हिंदी शब्दों का प्रयोग भी होता था। हिंदुस्तानी विचार तथा धार्मिक और ऐतिहासिक नाम सौदा की शायरी में आते हैं कृष्ण, अर्जुन, इंद्र के नाम भी इनकी शायरी में मिल जाते हैं।

जो मज़कूर उससे करता है कोई ग़मख़ार रोने का
तो कहता है कि चुप रह, है उसे आज़ार रोने का
मैं अपने हाल पर हँसता हूँ, वरना हर घड़ी ज़ालिम
मुहब्बत में तेरी सामां किया तैयार रोने का

''भाषा के परिमार्जन में सौदा की देन अत्यंत महत्त्वपूर्ण है'' (१२)

मीर - "मीर आज तक ग़ज़ल के सबसे बड़े कवि माने जाते हैं।उनके शेर शर के समान हृदय को बेंधते ही चले जाते हैं।"(१३) "मीर तक़ी मीर अकेले शायर हैं जिनको ख़ुदा - ए - सुख़न कहा जाता है"(१४) ग़ज़ल को भारतीय परिवेश से जोड़ने का कार्य मीर ने किया। "मीर ने ग़ज़ल को अपने युग का आईना बना दिया।"(१५) "उनकी ग़ज़ल आम बोलचाल की ज़बान में बातचीत का अंदाज लिये हुए है। फ़ारसी शब्दों के उपयोग में भी मीर ने हिंदुस्तानी लब-औ-लहजे को फ़ारसी लबो-लहजे पर प्रधानता दी..... . शब्दों के हिंदुस्तानी उच्चारण की तरह मीर की ग़ज़लों का तरन्नुम भी आवामी स्वर के बहुत ज़्यादा निकट है।उनकी ग़ज़ल में फ़ारसी ग़ज़ल की नफ़ासत से अधिक हिंदी शायरी की अरज़ी कैफ़ियात है। उपमाओं और शाब्दिक चित्रों के मामले में वह प्रचलित फ़ारसी ख़ज़ाने पर संतोष नहीं करते बल्कि अपने आसपास से चित्र प्राप्त कर लेते हैं। उन्होंने मकड़ी के जालों, चारपाइयों, मुफ़लिस के चिराग़ों, क़ब्रों से उठते हुए बगूलों, टूटे हुए मकानों और सूखे हुऐ ख़ून को जिस बेतकल्लुफ़ी से इस्तेमाल किया है उतनीही बेबाकी के साथ उन्होंने सिख और मराठा जैसे शब्द ग़ज़ल में दाखिल कर दिये।(१६)

उदाहरण के लिये कुछ शेर बहुत प्रसिद्ध हैं।

हम फ़कीरों से बे अदाई क्या
आन बैठे जो तुमने प्यार किया

पत्ता-पत्ता, बूटा - बूटा, हाल हमारा जाने है।
जाने न जाने, गुन ही न जाने, बाग़ तो सारा जाने है।

न मिल मीर अब के अमीरों से तू
हुए हैं फ़कीर उनकी दौलत से हम

मीर के दीनों-मज़हब को अब पूछते क्या हो, उन ने तो
कश्क़ा खैंचा, दैर में बैठा कब का तर्क इस्लाम किया

उल्टी हो गई सब तद्बीरें कुछ न दवा ने काम किया
देखा इस बीमारी-ऐ-दिल ने आख़िर काम तमाम किया

मीर की रचनाओं को फ़िराक ने भारतीय संस्कृति का विश्वविद्यालय कहा है।

सोज़ - ये श्रृंगार रस के शायर मशहूर हैं।उन्होंने अधिकतर ग़ज़लें ही लिखीं। फ़िराक़ ने इन्हें उच्छृंखल प्रेम की परम्परा का स्थापक बताया है।

हुआ दिल को मैं कहता - कहता दिवाना
पर उस बेख़बर ने कहा कुछ न माना

अठारहवीं सदी के अंत से दिल्ली की हालत दिन-ब-दिन गिरती जा रही थी। इसलिये दिल्ली के कवि लखनऊ जाने लगे सौदा, सोज़, मीर इत्यादि सभी दिल्ली के बड़े कवि लखनऊ पहुँच गये, और लखनऊ कविता काँ केंद्र हो गया।सोज़ लखनऊ के नवाब आसफुद्दौला के गुरू हो गये। लखनऊ के नवाब शायरी का बड़ा शौक़ रखते थे तथा कई नवाब ख़ुद भी शायरी करते थे। मुसहफ़ी, जुरअत, मीर हसन, इंशा, जाहिक आदि

दिल्ली से आने वाले प्रमुख शायर थे। लखनऊ में चूंकि सामाजिक, राजनैतिक माहौल दिल्ली से भिन्न था इसलिये यहां की शायरी भी भिन्न मिज़ाज की थी। नख-शिख वर्णन, दैहिक प्रेम का मांसल चित्रण यहां तक कि अश्लील तत्त्व भी अब ग़ज़ल में आ गये। प्रेम की आतंरिक अनुभूति की अपेक्षा प्रेमिका के बाह्य सौन्दर्य पर अधिक ज़ोर दिया जाता था। यहां तक कि यह शायरी कंघी-चोटी की शायरी के नाम से मशहूर हो गई थी। इसी को लखनऊ स्कूल के नाम से याद किया जाता है।

यह जो महंत बैठे हैं राधा के कुण्ड पर
अवतार बन के गिरते है परियों के झुण्ड पर

इंशा

लग जा गले से, ताब अब ऐ नाज़नीं नहीं
है है, ख़ुदा के वास्ते मत कर नहीं नहीं

जुरअत

इस प्रकार लखनऊ में ग़ज़ल में गंभीर तत्व ख़त्म हो गया था। लखनऊ के तत्कालीन रास-रंग के वातावरण में उल्लासवादी गंभीरता-रहित शैली की ग़ज़लें लिखी जा रही थीं। कविता के विषय की अपेक्षा लच्छेदार भाषा कहने का ढंग तथा अलंकारिकता पर ज़्यादा ध्यान दिया जा रहा था, कलापक्ष प्रबल था। लखनऊ स्कूल में २ बड़े शायर हुए नासिख़ और आतिश।

DISS O,152,1;N4,9AU:9
152N8
TH-7442

शैख इमाम बख़्श 'नासिख़' - इनकी ग़ज़लों की भाषा प्रमुखता से याद की जाती है क्योंकि इन्होंने भाषा की बहुत अधिक साज सवाँर तथा परिष्कार किया (यद्यपि विचारों की सूक्ष्मता तथा काव्य चेतना का इनमें अभाव रहा)

और तख़्तों की हमारी क़द्र में हाजत नहीं
ख़ान-ए-महबूब का कोई किवाड़ा चाहिये

इंतहाए-लाग़री से जब नज़र आया न मैं
हँस के वह कहने लगे, बिस्तर को झाड़ा चाहिये।
जिस्म ऐसा धुल गया है मुझ मरीज़े-इश्क़ का
देखकर कहते हैं सब तावीज़ है बाजू नहीं

आतिश - इनके दो छोटे-छोटे काव्य हैं जिनमें सिर्फ़ ग़ज़लें हैं। ग़ज़लों की भाषा के परिष्कार एवं विकास की दृष्टि से इनकी ग़ज़लें उल्लेखनीय हैं।

हुस्न किस रोज़ हमसे साफ़ हुआ
गुनहे इश्क़ कब मुआफ़ हुआ
फ़ातहे को जो परी आया
संगे-कब्र अपना कोहे-क़ाफ़ हुआ

दयाशंकर नसीम, वाजिद अली शाह, शौक़ आदि लखनऊ के प्रमुख शायर रहे। ग़ालिब, मोमिन, ज़ौक़ ये ऐसे नाम हैं जिनकी ग़ज़लें कालजयी ग़ज़लें हैं। ग़ज़ल के सम्पूर्ण सफ़रनामे में हिंदुस्तान में सर्वोच्च ऊचाँईयों को इनकी ग़ज़ल छूती है। इनके पूर्ववर्ती तथा परवर्ती कवियों में इनकी समानता कोई न कर सका। विशेषकर ग़ालिब की ''उर्दू के काव्य गगन में छोटे-छोटे लाखों सितारे चमक रहे हैं लेकिन इनमें से सबकी नहीं तो अक्सर की रोशनी को मांद कर देने वाला चाँद सिर्फ एक है और वह ग़ालिब है"। [१६] कह सकते हैं कि ग़ालिब से पहले ग़ज़ल की भावभूमि संकुचित थी किंतु ग़ालिब की चेतना इतनी विस्तृत थी कि ग़ज़ल के काव्य नियम का अनुशासन उनसे झेला नहीं जाता था उन्होंने कहा था-

बक़द्रे शौक़ नही ज़र्फ़े- तंगहा है ग़ज़ल
कुछ और चाहिये बुसअत मेरे बयाँ के लिये।

रगों में दौड़ते फिरने के हम नहीं क़ायल
जो आँख ही से न टपका तो फिर लहू क्या है

इश्क़ से तर्बीअत ने जीस्त का मज़ा पाया
दर्द की दवा पाई, दर्द बे दवा पाया

यूं ही दुख किसी को देना नहीं ख़ूब वर्ना कहता
कि मरे अदू को, यारब, मिले मेरी ज़िंदगानी।

मोमिन - इनकी ग़ज़लें 'उर्दू कुल्लियात' में मिलती हैं। इनकी भाषा अरबी-फ़ारसी युक्त थी किंतु इनकी ग़ज़लों में स्वाभाविकता मिलती है। काव्य प्रवाह में बहुत ही प्रभावपूर्ण बात इतनी सादगी से कह जाते थे कि सुनने वाला वशीभूत हो के रह जाए।

असर उसको ज़रा नहीं होता
रंज राहत-फ़िज़ा नहीं होता

तुम हमारे किसी तरह न हुऐ
वरना दुनिया में क्या नहीं होता

तुम मेरे पास होते हो गोया
जब कोई दूसरा नही होता

उसने क्या जाने क्या किया लेकर
दिल किसी काम का नहीं होता

क्यों सुने अर्ज़े-मुज़्तरिब 'मोमिन'
सनम आख़िर ख़ुदा नहीं होता।

ज़ौक़ - इनकी कुल १६७ ग़ज़लें प्राप्त हैं। इनकी ग़ज़लों की भाषा सरल तथा सहज है।

अब तो घबरा के ये कहते है कि मर जाएंगे
मर के भी चैन न पाया तो किधर जाएंगे

जौक़ जो मदरसे के बिगड़े हुऐ हैं मुल्ला
उनको मैख़ाने में ले आओ सँवर जाएंगे।

दिल्ली के अन्य ग़ज़लकारों में बहादुरशाह जफ़र का नाम भी विस्मरण योग्य नहीं है।इनकी ग़ज़लों में दुःख और करूणा की अनंत भावना पाई जाती है।

पसे-मर्ग मेरे मज़ार पर जो दिया किसी ने जला दिया
उसे आह दामने- बाद ने सरे शाम ही से बुझा दिया

इन्होंने हिंदी शब्दों का प्रयोग भी बड़ी सुन्दरता से किया है।

मैंने दिल दिया मैंने जान दी मगर आह तूने न क़द्र की
किसी बात को जो कभी कहा उसे चुटकियों में उड़ा दिया।

शेफ़्ता -ये मोमिन के प्रिय शिष्य थे।इनकी ग़ज़लों में भी मोमिन की भांति उच्च भाव एंव विशुद्ध भाषा मिलती है।

शायद इसी का नाम मुहब्बत है शेफ़्ता
एक आग सी है सीने के अंदर लगी हुई।

दाग़ - ये मुख्यतः ग़ज़ल के ही कवि माने जाते हैं।इनके ४ ग़ज़ल संग्रह हैं। दिल्ली की बोलचाल की भाषा, मुहावरों का सुन्दर प्रयोग, सामान्य-साधारण विचार किंतु भावपूर्ण शैली इनकी ग़ज़लों की ख़ासियत है।

शबे-वस्ल ज़िद में बसर हो गई
नहीं होते - होते सहर हो गई

दाग़ का नाम सुनके वो बोले
आदमी का ये नाम होता है?

१८वीं शता. के अंत में एक महत्वपूर्ण काम नज़ीर अकबराबादी ने हिंदू तथा मुस्लिम मान्यताओं का समन्वय करके कविता में लाने का किया।

नज़ीर अकबराबादी - इनका जन्म १७३५ ई० में हुआ था। ये किसी परम्परा से बंधे कवि नहीं थे। १८वीं शताब्दी की कविता की तुलना में इनकी कविता बहुत ज़्यादा प्रगतिशील है।इनकी यथार्थवादी कविता बीसवीं सदी की कविता से टक्कर लेती है। उदाहरण-

जब आदमी के पेट में आती है रोटियाँ
फूली नहीं बदन में समाती हैं रोटियाँ
या आदमी पे जान को वारे है आदमी
या आदमी को तेग़ से मारे है आदमी

१८वीं शता. के अंत से ही अंग्रेज़ी प्रभाव से भारतीय साहित्य में भी परिवर्तन दृष्टि—गोचर होने लगा था।१९वीं शता०. के आरंभ में यह परिवर्तन मुखर हो गया। दिल्ली कॉलेज की स्थापना के बाद नवजागरण की लहर आई।हाली और आज़ाद का नाम इस संबंध मे सर्वप्रथम है। ''यद्यपि भाषा को दाग़ और उनके समकालीनों ने पूर्णतः भारतीय बना दिया था किंतु नये ज़माने को देखते हुए चेतना को केवल भौतिक और आध्यात्मिक प्रेम और अभिव्यक्ति को केवल प्रियतम तथा गुलो-बुलबुल और शमा-परवाने तक सीमित रखना नवजागरण वादियों को अच्छा न लगा और मौलाना मु. आज़ाद और ख़्वाजा अल्ताफ़ हुसैन हाली ने प्रकृति चित्रण, सामाजिक उन्नति आदि के नये विषय लाकर नया क्षेत्र खोल दिया और पुराने साहित्यिक मूल्यों अतिश्योक्ति आदि के विरूद्ध जिहाद बोल दिया।(फ़िराक़-उर्दू भाषा और साहित्य, पृ० १७५)

मौलाना आज़ाद ने लाहौर में 'अंजुमने-पंजाब' के प्रथम सम्मेलन में एक ज्ञानपूर्ण व्याख्यान दिया और कविता में वास्तविकता से काम लेने, स्थानीय रंग पैदा करने और जीवन का सच्चा चित्रण करने का अनुरोध किया. और कहा कि हम कोयल, चंपा और चमेली, अर्जुन और भीम, गंगा-यमुना, हिमालय तथा अन्य स्थानीय वस्तुओं को बिल्कुल भूल गये हैं। उनका विचार था कि कविता को उस जीवन का प्रतिबिंब होना चाहिये जिसे हम जीते हैं।

अकबर इलाहाबादी-१९वीं शता. के एक अन्य प्रगतिशील शायर हुए हैं।उर्दू कविता की अंतर्मुखी परम्परा को छोड़ने वाले ये पहले शायर हैं। ग़ज़ल में व्यंग्य-विनोद इनसे ही शुरू हुआ। यद्यपि फ़िराक़ ने इन्हें द्वितीय श्रेणी का ग़ज़लकार बताया है किंतु इनकी ग़ज़लें विषय-चयन , शब्द-चयन तथा हास्य के लिहाज से नवीनता लिये हैं।

गोलियों के ज़ोर से करते है वो दुनिया को हज़्म
इससे बेहतर इस गिज़ा के वास्ते चूरन नहीं
ज़ेहन में जो घिर गया लाइंतहा क्यों कर हुआ
जो समझ में आ गया फिर वह ख़ुदा क्यों कर हुआ।

२०वीं सदी में आई सामाजिक चेतना से काव्य-चेतना भी परिवर्तित हुई और विचारशील कविता की प्रवृति बढ़ी।ग़ज़ल भी इससे प्रभावित हुई। इक़बाल, हसरत मोहानी तथा फ़िराक़ ये तीन नाम ग़ज़ल में प्रगतिशील तत्व लाने के लिए हमेशा स्मरण किये जाएंगे। किंतु ग़ज़ल सिर्फ विचारों की गठजोड़ से नहीं बन सकती भावना के बिना कविता दार्शनिक कुलाबा मात्र रह जाती है। हम देखते हैं कि इन सभी ग़ज़लकारों ने विचार के स्तर पर जहाँ प्रगतिशील तत्व अपनाए वहीं संवेदना के स्तर पर ग़ज़ल के

मूल तत्व जज़्बे को बरकरार रखा। बाद के शायरों में फ़ैज़ अहमद फ़ैज़, जोश, हफ़ीज़ जालंधरी, आनंद नारायण मुल्ला, चकबस्त, आदि बड़े शायर हुए। मजाज़, सरदार जाफ़री, साहिर, कैफ़ी आज़मी इत्यादि शायरों के कलाम मार्क्सिज़्म से प्रभावित हैं।

संदर्भ

1.	शामियाने कांच के - कुंअर बेचैन से उद्धृत	पृ.-9
2.	फ़िराक़ - उर्दू भाषा और साहित्य	पृ.-3
3.	वही,	पृ.-4-5
4.	ऐहतेशाम हुसैन - उर्दू साहित्य का इति.	पृ.-45
5.	वही,	पृ.-52
6.	वही,	पृ.-53
7.	वही,	पृ.-53
8.	वही,	पृ.-53
9.	फ़िराक़ - उर्दू भाषा और साहित्य	पृ.-13-14
10.	वही,	पृ.-16
11.	ऐहतेशाम हुसैन - उर्दू साहित्य का इति.	पृ.-74
12.	फ़िराक़ - उर्दू भाषा और साहित्य	पृ.-31
13.	ऐहतेशाम हुसैन - उर्दू साहित्य का इति.	पृ.-83
14.	सरदार जाफ़री - दीवाने मीर	पृ.-5
15.	वही,	पृ.-18
16.	वही,	पृ.-19
17.	फ़िराक़ - उर्दू भाषा और साहित्य	पृ.-100

ग़ज़ल हिन्दी में

हिंदी साहित्य ने बहुत से काव्य-रूप दूसरी भाषाओं के साहित्य से भी अपनाए हैं। जैसे जापानी से हाइकू ,अंग्रेजी से सॉनेट, एलेजी इत्यादि। उसी प्रकार फ़ारसी से हिंदी ने ग़ज़ल को अपनाया।

उल्लेखनीय है कि इन नवीन विधाओं को हिंदी ने सिर्फ़ रूप-शिल्प के तौर पर ही अपनाया भाव-बोध एवं संस्कार उनमें हिन्दी कविता के ही रहे । जैसे हिन्दी के हाइकू जापानी हाइकू परम्परा का उत्तरवर्ती विकास नहीं है।वह हिन्दी कविता की एक नयी शैली है, जो कि भाव-बोध के स्तर पर अपनी समकालीन हिन्दी कविता से पूरी तरह प्रभावित है। इसी तरह ग़ज़ल को हिन्दी काव्यधारा ग्रहण तो करती है किंतु अपने ढंग से, अपने स्वर में, अपने तौर-तरीकों पर। यह अपना तरीका क्या है ? यह परम्परानुगत तरीकों में ज़रा सा हेरफेर है। दुष्यंत कुमार का मशविरा था कि ''ज़रा सा तौर-तरीकों में हेरफेर करो तुम्हारे हाथ मे कॉलर हो आस्तीन नहीं''(१) हिंदी ने ग़ज़ल को इसी मशविरे के आधार पर अपनाया। फारसी में ग़ज़ल नाजुक मिज़ाज कविता थी। वह गुलो-बुलबुल, शमा-परवाना, साग़र-साक़ी तक सीमित थी।वह श्रृंगार रस से ओतप्रोत, महफ़िलों की शान, दरबारी कविता थी। "हिंदी ने ग़ज़ल को इस दरबारीपन से घरबारीपन की ओर मोड़ा"[२]। यानि ग़ज़लके तौर-तरीकों में हेरफेर हुआ, अब ग़ज़ल महफ़िलों में आश्रयदाताओं के गुण गाना छोड़कर जन-गण-मन को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाली सशक्त कविता बनी।

यद्यपि अभिव्यक्ति की इस शैली में लोच, लचक और सादगी वही थी लेकिन जनचेतना से जुड़कर ग़ज़ल विचार के स्तर पर सशक्त हुई।[३] हिंदी ग़ज़ल वालों ने ग़ज़ल को छंद के रूप में ही स्वीकार किया उसे कथ्य अपना ही दिया। फ़ारसी की जो 'ब्यूटिफुल' कविता थी हिंदी में वह 'बोल्ड एण्ड ब्यूटिफुल' बन कर उभरी। इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी ग़ज़ल

उर्दू ग़ज़ल का हिंदी भाषा में 'एक्सटेंशन' मात्र नहीं है। वह समकालीन हिंदी कविता के भाव-बोध, चिंतन एवं आंदोलनों से प्रभावित है। यह हिंदी की एक स्वतंत्र काव्यविधा है, जिसका बुनियादी ढांचा फ़ारसी कविता से लिया गया है किंतु कथ्य एवं संस्कार हिंदी कविता के अपने हैं। अतः ग़ज़ल को हिंदी मे पूर्णतः आयातित नही स्वीकार किया जा सकता. अस्तु!

हिंदी में ग़ज़लें भारतेंदु युग से ही लिखी जा रही हैं। यद्यपि इतिहासकार तो हिंदी ग़ज़ल का प्रादुर्भाव १३वीं शता. से ही मानते हैं।कुछ विद्वानों का मानना है कि हिंदी में ग़ज़ल सीधे फ़ारसी से आई और उर्दू से पहले आई। हिंदी ग़ज़ल के जन्मदाता के रूप मे अमीर खुसरो तथा कबीर का नाम आता है।कुछ विद्वान अमीर खुसरो को तथा कुछ कबीर को हिंदी का पहला ग़ज़लकार मानते हैं। कबीर की निम्न ग़ज़ल पहली हिंदी ग़ज़ल मानी जाती है -

हमन है इश्क़ मस्ताना हमन को होशियारी क्या।
रहे आज़ाद या जग में हमन दुनिया से यारी क्या
जो बिछड़े हैं पियारे से भटकते दर-ब-दर फिरते
हमारा यार है हम में हमन को इंतज़ारी क्या।

यद्यपि कई इतिहासकार जैसे शुआजती अली संदेलवी (तारूफ तारीख़े-उर्दू) इस ग़ज़ल को प्रथम हिंदी ग़ज़ल का दर्जा देते हैं किंतु इसकी प्रामाणिकता पर संदेह है क्योंकि कबीर ग्रंथावली (डॉ॰ श्याम सुंदर दास), कबीर ग्रंथावली (माता प्रसाद गुप्त), कबीर ग्रंथावली (डॉ॰ पारसनाथ तिवारी) आदि द्वारा संपादित ग्रंथों में इस बात का उल्लेख नहीं मिलता है।

उपलब्ध जीवन साक्ष्यों के आधार पर भी कबीर का जीवनकाल १३९८ ई.- १४९७ ई. तक माना जाता है जबकि खुसरो का समय १२५३ - १३२५ ई. माना गया है।इस दृष्टि से अमीर खुसरो कबीर की अपेक्षा अधि-क प्राचीन कवि ठहरते हैं, एवं खुसरो ही प्रथम हिंदी ग़ज़लकार स्वीकार

किये जाते हैं। अमीर खुसरो की निम्न ग़ज़ल प्रथम हिंदी ग़ज़ल मानी जाती है जो उन्होंने महमूद शीरानी को १३वीं सदी हिजरी के आरम्भ में लिखी।

जब यार देखा नैन भर, दिल की गई चिंता उतर
ऐसा नहीं कोई अजब, राखे उसे समझाय कर
जब आँख से ओझल भया, तड़पन लगा मेरा जिया
हक्का इलाही क्या किया, आंसू चला भर लाय कर
तू तो हमारा यार है, तुझ पर हमारा प्यार है
तुझ दोस्ती बिसियार है, एक शब मिलो तुम आय कर

१३वीं शती के प्रारंभ में सूफ़ी संत ख़्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती ने भी फ़ारसी तथा हिंदी में ग़ज़लें लिखीं। अमीर खुसरो ने तो फ़ारसी तथा हिंदी का समन्वय करके ग़ज़लें लिखीं।

जे हाले-मिस्की मकुन तग़ाफुल, दुराय नैना बनाय बतियाँ
किताबें-हिजराँ न दारम-ए-जां, न लेहु काहे लगाय छतियाँ

यह ग़ज़ल निस्संदेह फ़ारस तथा हिंदुस्तान के संस्कारों के समन्वय का, उस संक्रमण काल का पता देती है। हिंदी ग़ज़ल ने जन्म भले ही १३वीं शताब्दी में लिया हो किंतु उसका विकास उर्दू फ़ारसी ग़ज़ल के समान नहीं हुआ। भारतेंदु युग से हिंदी में ग़ज़ल कहने का रूझान मिलने लगा। अध्ययन की दृष्टि से हिंदी ग़ज़ल के विकास को हम स्थूल रूप से तीन चरणोंमेंबाँट कर देख सकते हैं- १ भारतेंदु काल, २ छायावाद काल, ३ स्वातंत्रयोत्तर काल।

भारतेंदु काल : भारतेंदु ख़ुद ग़ज़ल लिखते थे ग़ज़लों में इनका तख़ल्लुस 'रसा' था। नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित भारतेंदु ग्रंथावली (भाग २) में इनकी ग़ज़लें मिलती हैं। इनकी ग़ज़लों में विद्रोही तथा रूमानी दोनों ही तेवर मिलते हैं।अंग्रेजी शासन के प्रति विद्रोह उनकी इस

ग़ज़ल मे दृष्टतम है।

हिला देंगे अभी हम संग-दिल तेरे कलेजे को
हमारी आह-ए-आतिशबार से पत्थर पिघलते हैं

भारतेंदु ने श्रृंगारपरक ग़ज़लें भी लिखी उनकी 'होली' पर लिखी ग़ज़ल रीतिकालीन काव्य से कहीं कम नहीं है।

रसा गर जामे-मय ग़ैरों को देते हो तो मुझको भी
नशीली आँख दिखलाकर करो सरशार होली में

भारतेंदु ने विशुद्ध उर्दू में भी ग़ज़लें लिखी किंतु उनकी भाषा तत्कालीन ग़ज़लों की भाषा से भिन्न ही रही।

भारतेंदु युग के दूसरे प्रमुख ग़ज़लकार पण्डित बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन हैं। ये 'अब्र' उपनाम से ग़ज़लें कहते थे। अपने उपनाम अब्र के मुताबिक इनकी ग़ज़लों में भी प्रकृति चित्रण विशेषकर बादल का वर्णन काफ़ी मिलता है।

तेरे इश्क में हमने दिल को जलाया
क़सम तेरे सर की मज़ा कुछ न आया
चमन में है बर्सात की आमद-आमद
यहाँ आसमाँ पर सियह अब्र छाया
मचाया है मोरों ने क्या शोरे-महशर
पपीहों ने क्या पुर ग़ज़ब रट लगाया।

इनकी विशेषता है कि न केवल विषय की दृष्टि से बल्कि भाषा की दृष्टि से भी इनका भारतीयता के प्रति झुकाव दिखता है। खड़ी बोली में लिखी उनकी इस ग़ज़ल का तो पूरा मिसरा ही ब्रजभाषा का है।

'सिर मोर मुकुट सोहे कटि पीत पट विराजे'

ठेठ हिंदी ग़ज़ल के सन्दर्भ में प्रतापनारायण जी का नाम उल्लेखनीय है। यद्यपि इन्होंने ग़ज़लें कम लिखीं किंतु ग़ज़ल की भाषा के विकास की दृष्टि से इनकी ग़ज़लें महत्त्व रखती हैं।

क्यों दीनानाथ मुझपे तेरी दया नहीं
आश्रित तेरा नहीं हूँ कि तेरी प्रजा नहीं।

एक अन्य ग़ज़ल में हिंदी-उर्दू-अंग्रेज़ी तीनों के शब्द मौजूद हैं।

बसो मूर्खते देवि, आर्यों के जी में
तुम्हारे लिये हैं मकाँ कैसे - कैसे
अनुद्योग, आलस्य, संतोष, सेवा
हमारे हैं अब मेहरबां कैसे-कैसे
प्रताप अब तो होटल में निर्लज्जता के
मज़े लूटती है ज़बाँ कैसे - कैसे

इस प्रकार भारतेंदु युग में ग़ज़लों में हिंदी शब्दों के इस्तेमाल का जो आग्रह बढ़ा था आगे चलकर वह इतना बढ़ा कि द्विवेदी युग की ग़ज़लों में हिंदी शब्दों का बाहुल्य हो गया । बोल चाल की भाषा पीछे छूट गई। विषयों में समाज, राष्ट्र तथा प्रकृति प्रमुख रहे। भाषा में तत्सम शब्दों के प्रयोग की प्रवृत्ति बढ़ने लगी।

श्रीधर पाठक की ग़ज़ल का एक उदाहरण देखिये-

कहीं पे स्वर्गीय कोई बाला सुमंजु वीणा बजा रही है
सुरों के संगीत की सी कैसी सुरीली गुंजार आ रही है
कहीं नई तान प्रेममय है, कही प्रकोपन कही विनय है,
दया है, दाक्षिण्य का उदय है, अनेकों बातें बना रही है।

विशुद्ध तत्सम शब्दों के प्रयोग की यह प्रवृति कोमल स्वभाव की ग़ज़ल झेल न सकी तथा इस शैली का आगे विकास नहीं हुआ। विधा के अनुरूप भाषा विधान आवश्यक है। आगे के ग़ज़लकारों ने इस बात को

समझा एंव बोलचाल की आम भाषा का प्रयोग किया जिसमें हिंदी तथा उर्दू दोनों भाषाओं के शब्द थे। हरिऔध की ग़ज़लों में अंग्रेज़ी शब्द भी मिल जाते है। बानगी देखिए-

क्यों पले पीसकर किसी को तू
बहुत पालिसी बुरी तेरी
हम रहे चाहते पटाना भी
पेट तुझसे नहीं पटी मेरी

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने भी ग़ज़लें लिखी थीं।

इस देश को हे दीन बंधो, आप फिर अपनाइये
भगवान भारतवर्ष को फिर पुण्यभूमि बनाइये।

(भारत भारती)

यह स्वतंत्रता आंदोलन का समय था। राष्ट्र-प्रेम तथा स्वतंत्रता की चाह चूंकि हर हृदय में विद्यमान थी;अतः राष्ट्रप्रेम से ओतप्रोत कविताएं ख़ूब लिखी जा रही थीं।इस दौर में बहुत से देश-भक्त क्रांतिकारी कवियों ने ग़ज़लें भी लिखीं राष्ट्र-प्रेम की ये ग़ज़लें न केवल तब बल्कि आज भी लोगों की जुबान पर चढ़ी रहती हैं। गया प्रसाद शुक्ल सनेही 'त्रिशूल', पं० जगदंबा प्रसाद मिश्र 'हितैषी', राम प्रसाद 'बिस्मिल,' अशफ़ाक़ उल्ला ख़ाँ आदि ऐसे ही प्रमुख नाम हैं। बतौर उदाहरण चंद अशआर देखिए।

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर बरस मेले
वतन पर मिटने वालों का यही बाक़ी निशां होगा
वतन की आबरू का पास देखे कौन करता है
सुना है आज मक़्तल में हमारा इम्तिहां होगा।

हितैषी

सरफ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है
देखना है ज़ोर कितना बाजू-ए-कातिल में है।

बिस्मिल

बहुत लिक्खे गये अफ़साने इश्क़ो-उन्सो-उल्फ़त के
हिकमते-हुब्बे-क़ौमी की भी अब तहरीर होने दो

सनेही

तंग आकर हम भी उनके जुल्म से, बेदाद से
चल दियें सू-ए- अदम ज़िंदाने फ़ैज़ाबाद से

अशफ़ाक़ उल्ला खाँ

द्विवेदी युगीन हिंदी ग़ज़लों में प्रेम व भक्ति के साथ ही स्वराज्य तथा क्रांति की भावना भी प्रबल रही। विषय की दृष्टि से ग़ज़ल के क्षेत्र में वैविध्य दिखलाई पड़ता है।भाषा भी शुद्ध हिंदी तथा मिली जुली दोनों प्रकार की रही, यानि ग़ज़ल प्रयोग की प्रक्रिया में रही।छायावादी युग में निराला की ग़ज़लों सेप्रगतिशीलता आई।'बेला' नाम के संग्रह में इनकी ग़ज़लें मिलती हैं। अलग-अलग बहरों की इसमें २८ ग़ज़लें हैं। इनमें फ़ारसी के छंदशास्त्र का सफलतापूर्वक निर्वाह किया गया है। इनकी भाषा सरल हिंदी ही रही। इनकी ग़ज़लों में कबीर की भांति तंज मिलता है।

भेद कुल खुल जाऐ वह सूरत हमारे दिल में है
देश को मिल जाए जो पूंजी तुम्हारी मिल में है
पेड़ टूटेंगे, हिलेंगे ज़ोर की आंधी चली
हाथ मत डालो, हटाओ पैर, बिच्छू बिल में है।

निराला के ही समकालीन 'प्रसाद' ने भी कुछ ग़ज़लें लिखीं। इनकी ग़ज़लें प्रेम तथा उच्चमानवीय आदर्शों की दार्शनिक मनोभूमि पर आधारित हैं।इनकी ग़ज़लों की भाषा शुद्ध हिंदी है उर्दू का कोई शब्द नहीं-

विमल इंदु की विशाल किरणें प्रकाश तेरा बता रही हैं
अनादि तेरी अनंत माया जगत् को लीला दिखा रही है

यद्यपि उर्दू शैली या लहजा प्रसाद ने भी लिया किंतु भाषा के स्तर पर कोई समझौता नहीं।

उन्हें अवकाश ही इतना कहां है मुझसे मिलने का
किसी से पूछ लेते हैं यही उपकार करते हैं।

माखनलाल चतुर्वेदी -'एक भारतीय आत्मा' के नाम से प्रसिद्ध चतुर्वेदी जी ने ज़्यादातर कविताएं, राष्ट्रीय प्रेम भावना की ही लिखीं किंतु ग़ज़लें ज़्यादातर प्रेमपरक। इनकी ग़ज़लों की भाषा तथा भाव दोनों पर उर्दू फ़ारसी प्रभाव अधिक पाया जाता है। प्रेम की पद्धति भी फ़ारसी वाली ही हैं जिसमें कठोर हृदय प्रेमिकाको मनाने के लिये प्रेमी अपनी जान तक देने को तैयार रहता है।

जब तक निगोड़ा हिरदे को शूली पर टंगवाता होता
तब गुन का गलफंदा कसकर साजन के तम रथ जाती मैं।
वीराना हो वृंदावन हो, तुमको वनवास नहीं लगता
चढ़ जाऐ चरण पर सहस्र बार तुमको तो पास नहीं लगता

स्वातंत्रयोत्तर ग़ज़ल- स्वतंत्रता के बाद लिखे जाने वाले समग्र साहित्य की तरह ग़ज़लों में भी सभी विषय मिलते हैं।सामाजिक एवं यथार्थवादी बोध भी ग़ज़लों में आने लगा।भाषा पर यद्यपि उर्दू फ़ारसी प्रभाव बढ़ रहा था। इस समय को भी हम ग़ज़ल लेखन के सन्दर्भ में दो भागों में बाँट सकते हैं-दुष्यंत पूर्व तथा दुष्यंत के बाद। दुष्यंत पूर्व तथा दुष्यंत कुमार के समकालीन ग़ज़लकारों में रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', बलबीर सिंह 'रंग', शमशेर, त्रिलोचन प्रमुख हैं।

रामेश्वर शुक्ल अंचल - इनका ग़ज़ल संग्रह है 'इन आवाज़ों को ठहरा लो'। इसमें व्यक्तिगत पीड़ा के साथ ही आम आदमी का दर्द भी मुखर है। शोषण के विरूद्ध विद्रोह इस ग़ज़ल में देखा जा सकता है।

चूस रही पूंजी को रिश्वत नफ़ाखोरियों की जोंकें
रोज़ हमीं मर-मर जीते हैं जी-जीकर मरते हैं

चुप रहेगी सारी आहट कबतक युग-परिवर्तन की
किसके नारों की गाढ़ी सुरखी से शोले झरते हैं।

या

किसकी जुल्फों में ढली जाती है मेरी दुःख की रात
दर्पणी छाँहों में किसकी डूब जाती है मेरी प्यास

बलबीर सिंह 'रंग' की ग़ज़ल

नदी के हाथ निर्झर की मिली . पाती समंदर को
सतह भी आ गई गहराईयों तक तुम नहीं आए
किसी को देखते ही आपका आभास होता है
निगाहें आ गई परछाईयों तक तुम नहीं आए।

शमशेर-अपने समय के सबसे समर्थ हिंदी ग़ज़लकार शमशेर बहादुर सिंह है। शमशेर सबसे पहले कवि हैं जिन्होंने हिंदी पाठकों को ग़ज़ल के सही रूप से परिचित करवाया।उनकी ग़ज़लों में पूर्ण ग़ज़लियत मिलती है; नाज़ुक ख़याली मर्म को छूती है, भाषा लोचदार है तथा बहरों का भी निर्वाह है। उर्दू के कई बड़े शायरों का प्रभाव इन की ग़ज़ल पर देखा जा सकता है।

इल्मों-हिकमत, दीनों- ईमाँ, मुल्कों- दौलत, हुस्नों-इश्क़
आपको बाज़ार से जो कहिये ला देता हूँ मैं

शमशेर

हर जिंस के ख़्वाहाँ मिले बाज़ारे जहाँ में
लेकिन न मिला कोई ख़रीदारे मुहब्बत

मीर

ले आएंगे बाज़ार से जाकर दिलो-जाँ और

ग़ालिब

कभी - कभी शमशेर दूसरों की ज़मीन पर भी शायरी करते दिखाई देते हैं।

गई वो बात कि हो गुफ़्तगू तो क्यों कर हो
कहे से कुछ न हुआ फिर कहो तो क्योंकर हो।

ग़ालिब

कहों तो क्या न कहें, पर कहो तो क्योंकर हो
जो बात-बात में आ जाएं वो, तो क्योंकर हो

शमशेर

शमशेर की ग़ज़लों में इंसानी रिश्तों का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण मिलता है। ये प्रेम एवं सौन्दर्य के साथ-साथ पीड़ा को भी ग़ज़ल का आवश्यक अंग मानते थे।

इश्क़ की शायरी है ख़ाक, हुस्न का ज़िक्र है मज़ाक़
दर्द में गर चमक नहीं, रूह में गर जिला नहीं

हिंदी कवियों में ग़ज़ल के प्रति लगाव पैदा करने का श्रेय शमशेर को जाता है। इनकी भाषा हिंदी-उर्दू की दूरी को कम करती है। इनकी ग़ज़लों में एक ओर तो परम्परागत प्रेमानुभूति के दर्शन होते हैं दूसरी ओर आधुनिक युग में व्याप्त कुण्ठा, संत्रास, घुटन और संघर्ष भी दिखता है।

उर्दू शब्दों से परिपूर्ण होने पर भी शमशेर अपनी ग़ज़लों को हिंदी ग़ज़ल मानते थे। ग़ज़ल के फॉर्म के संबंध में शमशेर जी की मान्यता थी कि किसी फॉर्म को अपनाने या नहीं अपनाने से कविता की मूल स्थिति पर कोई फ़र्क नही पड़ता। यदि अंतर्वस्तु में अनुभव की वास्तविकता और गहराई है तो रूप-शिल्प ख़ुद प्रभावशाली हो जाएगा।

त्रिलोचन - इनका ग़ज़ल संग्रह १९५६ में 'गुलाब और बुलबुल' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। आधुनिक परिवेश का यथार्थ चित्रण त्रिलोचन ने ग़ज़लों

में उतारा। आस्था-प्रेम के साथ ये महानगरीय जीवन के संघर्ष, घुटन-टूटन को भी दर्शाते हैं।

प्रबल जलवात पाकर सिंधु दुस्तर होता जाता है
कठिन संघर्ष जीवन का कठिनतर होता जाता है
कमाता एक था परिवार पूरा चैन करता था
अकेले का भी जीवन अब तो दूभर होता जाता है।

राजनीति से जुड़ी ग़ज़लें त्रिलोचन ने नहीं लिखीं। प्रकृति प्रेम त्रिलोचन के काव्य की विशेषता है।

बहुत दिन बाद कोयल पास आकर आज बोली है
पवन ने आके धीरे से पवन की गांठ खोली है।

कुछ शेर दूसरों की ज़मीन पर भी लिखे गये हैं-

कश्ती हमारी और तुम्हारी जहाँ डूबी
सच पूछो तो ऐसा कोई पानी वहाँ न था

त्रिलोचन

इसी से मिलता जुलता एक पुराना शेर है।

अगर ग़म था तो ये ग़म था कि
जहाँ मेरी कश्ती डूबी वहाँ पानी बहुत कम था।

यथार्थवाद तथा जीवन की पकड़ त्रिलोचन की ग़ज़लों की विशेषता है। इनकी ग़ज़लों की आत्मा मूलतः हिंदी की है।

दुष्यंत कुमार - हिंदी ग़ज़ल के क्षेत्र में सर्वप्रथम जो नाम मस्तिष्क में उभरता है वह दुष्यंत कुमार का है। १९६० के आसपास इन्हें ग़ज़ल के क्षेत्र में ख्याति मिली। इससे पूर्व भी दुष्यंत एक स्थापित कवि थे 'सूर्य का स्वागत', 'आवाज़ों के घेरे में' तथा 'जलते हुए बन का बसंत' इनकी

प्रकाशित काव्य-कृतियाँ थीं। शमशेर तथा त्रिलोचन से प्रभावित होकर दुष्यंत ग़ज़ल लेखन के क्षेत्र में उतरे। १९७५ में इनका ग़ज़ल संग्रह 'साये में धूप' छपा। इनकी ग़ज़लों में उर्दू बहरों का प्रयोग मिलता है।

किसी भी श्रेष्ठ साहित्यिक रचना के लिये अपने समय के प्रति चेतना, प्रतिबद्धता पहली शर्त है। दुष्यंत ने हिंदी ग़ज़ल को परम्परागत प्रेम और सौन्दर्य की संकीर्ण परिधि से निकाल कर समसामयिक जीवन सन्दर्भों से जोड़ा। सर्वहारा वर्ग के प्रति दर्द इनकी ग़ज़लों में है। इन्होनें जीवन के विकृत पक्षों को उखाड़ा है विशेषकर राजनीति पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं-

तू न समझेगा सियासत, तू अभी इन्सान है

देश के गौरव तथा अभिमान के गीत गा-गा कर कवि लोगों को भुलावे में नहीं रखना चाहता।

कल नुमाइश में मिला वो चीथड़े पहने हुए
मैंने पूछा नाम तो बोला कि हिंदुस्तान हूँ।

देश की स्वतंत्रता से लोगों ने जो उम्मीदें लगा रखी थीं और स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत जो मोहभंग हुआ उस मोहभंग की सच्ची तस्वीर इस शेर में है-

कहाँ तो तय था चिराग़ा हरेक घर के लिये
कहाँ चिराग़ मयस्सर नहीं शहर के लिये।

फिर शायर अपनी शायरी का उद्देश्य भी बताता है कि सिर्फ़ मनबहलावे के लिये ही मैं नहीं लिख रहा हूँ-

सिर्फ़ हंगामा खड़ा करना मेरा मक़सद नहीं,
मेरी कोशिश ये है कि सूरत बदलनी चाहिये।

और इस सूरत बदलने के लिये वह बहुत बेचैन हो उठता है-

अब तो इस तालाब का पानी बदल दो
ये कंवल के फूल कुम्हलाने लगे हैं

पक गई है आदतें बातों से सर होगीं नहीं
कोई हंगामा करो ऐसे गुज़र होगी नहीं

शायर सिर्फ सलाह - मशविरा ही नहीं देता है पूर्ण आशावाद रखता है-

कौन कहता है आस्मां में सूराख नहीं हो सकता
एक पत्थर तो तबियत से उछालों यारों।

दुष्यंत ने पूरी 'परफैक्ट' ग़ज़लें लिखी हैं। भाव, विषय, शिल्प अद्वितीय है।उर्दू के काव्यशास्त्रीय बंधन भी शिथिल नहीं पड़े हैं और आधुनिकता भी मिलती है। अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करने से भी ये हिचकिचाते नहीं हैं दरअस्ल हिंदी ग़ज़ल की परिभाषा ही यही है कि ग़ज़ल के फ्रेम में ही नई सूरत की ग़ज़ल रखी जाएं ! नज़ाकत, लोच, रवानी के साथ ही ठोस वस्तुतत्व भी हो। वैचारिक धरातल पर दुष्यंत की ग़ज़ल सोचने पर मजबूर करने वाली ग़ज़ल है।

सूर्यभानु गुप्त - सर्वाधिक प्रकाशित होने वाले शायर सूर्यभानु गुप्त हैं।ये १९६० के दशक के शायर हैं तीव्रानुभूसि, प्रवाह, स्वाभाविक चित्रण तथा सीधी सरल शब्दावली में चिंतन इनकी ग़ज़लों की ख़ासियत है।

क्या बतलाए जीवन क्या है ?
पानी पर इक नाम लिखा है

भौतिकवादी युग में ग़ायब होती जा रही संवेदना, बढ़ता हुआ अजनबीपन देखकर शायर कहता है-

ले आया भेद चाँद का अपना न पा सका
ये आदमी के साथ बड़ा हादसा हुआ

शहर में आम आदमी का अस्तित्व क्या है ? समुद्र में जों बूंद का अस्तित्व है।

हाथ को हाथ साहब सुझाई न दें
चंद जेबों में सिमटा शहर ज़िंदगी
सौ जगह रफ़ू की गई शर्ट है
क्या करें कोई लेकर बशर ज़िंदगी।

इस तरह हिंदी - उर्दू -अंग्रेज़ी की मिली-जुली भाषा जों हम बोलते हैं. तथा बेख़्याली में पता नहीं चलता कि हम क्या भाषा बोल रहे हैं।यही भाषा आजकल के ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल में अपनाई। अनावश्यक सप्रयास राजाओं - नवाबों वाली औपचारिक जुबान जो कि तहज़ीब के नाम पर ज़बरदस्ती ढूंढ - ढूंढ कर ग़ज़ल में पिरोई जाती थी उस जुबान को त्यागने पर ही ग़ज़ल आम जनता से जुड़ सकी। कोठी के ज़ीने से, दरबारी चकाचौंध से, वैभव-सम्पन्नता से निकाल कर आम जनजीवन की गलियों में ग़ज़ल को लाने में इस भाषा परिवर्तन की बड़ी भूमिका रही। नये प्रतीक, अछूते उपमान, नये बिंब इन सब ने ग़ज़ल को हिंदी ग़ज़ल बनाया। अन्य हिंदी ग़ज़लकारों में अदम गोण्डवी, मुक़ीम भारती, डॉ० कुँअर बेचैन, नीरज, डॉ० उर्मिलेश, यश खन्ना नीर, नईम, हस्तीमल हस्ती, डॉ० अख़्तर नज़्मी, ज़हीर कुरैशी, अशोक अंजुम, वर्षा सिंह, शेर जंग गर्ग, विज्ञान व्रत, राजकुमारी रश्मि, हनुमंत नायडू इत्यादि प्रमुख हैं। हिंदी ग़ज़लकारों की सूची बहुत विस्तृत है कुछ उर्दू ग़ज़लकार हिंदी में भी लिखते हैं जैसे बशीर बद्र, निदा फाज़ली आदि।

सन्दर्भ

1.	दुष्यंत कुमार	-	साये में धूप	पृ.-64
2.	शेरजंग गर्ग	-	आजकल, मई 81,	पृ.-7
3.	कुँअर बेचैन	-	शामियाने कांच के	पृ.-34.

''हिंदी ग़ज़ल का आधुनिक सन्दर्भ और अदम गोण्डवी''

समय एक सतत् परिवर्तन की प्रक्रिया से गुज़रता रहता है। यह परिवर्तन जब व्यापक पैमाने पर होते हैं तो वर्ग-भेद तथा संक्रांति की स्थिति आती है, नवीनता के प्रति आकर्षण बढ़ता है, पुराने जीवन-मूल्य पीछे छूट जाते हैं और इन ह्रासशील जीवन मूल्यों का स्थान लेने नये मूल्य आगे आते हैं इन नये मूल्यों का ग्रहण ही आधुनिकता है।

यथास्थिति और रूढ़ियों (चाहे वे सामाजिक रूढ़ियाँ हो या साहित्यिक रूढ़ियाँ) को तोड़ने वाला रचनाकार नये विचारो से जुड़ता है और अपने इन नये विचारों की प्रस्तुति के लिये नये संवेदनों को अपने ढंग से प्रस्तुत करता है। इस प्रकार अभिव्यक्ति का एक नया रूप सामने आता है। नवीन अभिव्यक्ति के लिये कवि नये माध्यम तलाश करता है जिस का परिणाम होता है भाषा, बिंब, प्रतीक, मुहावरों तथा शिल्प आदि में नवीनता! यही नवीनता रचना का आधुनिक सन्दर्भ है।

बदलती हुई स्थितियों के अनुसार साहित्य में भी आधुनिकता आती गई। ग़ज़ल के क्षेत्र में भी पुरानी ग़ज़ल तथा अब की ग़ज़ल में अंतर दिखाई देता है। प्रायः ग़ज़ल को शुरू से रूमानी विधा माना जाता रहा है और इसी के चलते गाई जाने लायक ग़ज़लों को लोकप्रियता ज़्यादा मिली है। जहाँ भी ग़ज़ल में कोई ग़ैर रोमांटिक विषय या ऐसी कोई शब्दावली आ गई जो इस की नाज़ुक मिज़ाजी एवं गीतिपरकता को भंग करती हो तो ग़ज़ल के विद्वान कोहराम खड़ा कर देते थे तथा ऐसे 'भद्दे प्रयोगों' का विरोध करते थे। उनके अनुसार इससे ग़ज़ल की 'ग़ज़लियत' पर आंच आती थी। अतः शुरू से ही ग़ज़ल रदीफ़-काफ़िये के अनुशासन में तो रही ही विषय भी 'जुल्फ़- अंगड़ाई-तबस्सुम-चांद-आईना-गुलाब' ही रहे(१)। इस तरह रीतिकालीन कविता की तरह ग़ज़ल भी रीतिबद्ध कविता ही थी । यह श्रृंगार का वह सिक्का थी जिसके एक पहलू पर संयोग था तो दूसरे पर वियोग। किंतु आज भी ग़ज़ल वैचारिक रूप से सशक्त है। यह सशक्ति हम

देखते हैं वह यथार्थ से जुड़ने के बाद आई है। यह यथार्थ जनजीवन से संपृक्ति है। यही वह बिंदु है जहां ग़ज़ल अपनी पूर्ववर्ती ग़ज़ल से भिन्नता दिखाती है।यथार्थ से जुड़ने का अर्थ कल्पनाहीनता नहीं है, ना ही वस्तुस्थिति का प्रचार मात्र। विचार और संवेदना दोंनों स्तरो पर संतुलन होना चाहिये और यह संतुलन हमें आधुनिक ग़ज़लों में मिलता है।

ग़ज़ल हो कविता हो या साहित्य की कोई भी विधा हो, मनुष्य, मनुष्यता और समाज से जुड़े सवालों का सामना करने की सामर्थ्य अगर उसमें है तभी वह प्रासंगिकता एवं सार्थकता की कसौटी पर खरा उतर सकता है। ग़ज़ल में जब हम आधुनिक सन्दर्भों की बात करते हैं तो हमारा मंतव्य इसी सामर्थ्य से होता है। हम देखते हैं कि अब ग़ज़ल समसामायिक जीवन-सन्दर्भों से सीधे साक्षात्कार करती है तथा इसी में अपनी सार्थकता भी मानती है।

> ''अदब गर ज़िंदगी के दायरे से दूर होता है
> तो वह तहज़ीब के सीने में एक नासूर होता है।" (२)
>
> - अदम गोण्डवी

ग़ज़ल में यद्यपि कविता की तरह कोई काव्यान्दोलन नहीं चले, किंतु '६० के आसपास से ग़ज़ल के क्षेत्र में हम एक नई चेतना पाते हैं।इस चेतना के अग्रदूत दुष्यंत कुमार थे। यद्यपि दुष्यंत से पहले भी निराला, प्रसाद आदि अनेक कवियों ने ग़ज़ल में आधुनिक प्रयोग किये, लेकिन ग़ज़लों की कभी उनके कृतित्व में केंद्रीय भूमिका नहीं रही। शमशेर, त्रिलोचन, बलबीर सिंह रंग, सूर्यभानु गुप्त आदि की ग़ज़लें भी विस्मरण योग्य नहीं हैं। इन्होंने भी हिंदी कविता के क्षेत्र में ग़ज़ल को पर्याप्त समृद्ध किया ; किंतु हिंदी कवियों को ग़ज़ल लिखने की उमगं दुष्यंत को पढ़ने के बाद ही उठी। ग़ज़ल की व्यक्ति भावना को सामाजिक चेतना से जोड़ने के लिए दुष्यंत हमेशा याद किये जाएंगे। इन्होंने अपने शिल्प की सुविधानुसार ग़ज़ल के शास्त्रीय बंधनों से कुछ छूट भी ली। अपने ग़ज़ल संग्रह 'साये में धूप' की भूमिका (मैं स्वीकार करता हूँ ।) में उन्होंने स्वीकार किया है कि अपनी सुविधानुसार उन्होंने कुछ शब्दों के छंद की दृष्टि से छूट भी ली है जैसे- 'शहृ' का

'शहर' या 'वज़्न' का 'वज़न '। ये उर्दू के शब्द हैं किंतु दुष्यंत कुमार ने इनका शब्द-कोशीय रूप न अपना कर बोलचाल का रूप अपनाया। जो कि शास्त्रीय मापदण्डों पर एक दोष है। किंतु हिंदी ग़ज़ल शायर को इतनी छूट देती है, क्योंकि यह लिपि एवं उच्चारण के अंतर के कारण ज़रूरी है कि उर्दू एवं हिंदी वाले अगर एक दूसरे के शब्दों को अपनाएं तो वे उसे पूर्णतः आत्मसात करें। जैसे कि हिंदी का ब्राहमण उर्दू में बरहमन लिखा जाता है यह प्रयोग ग़ालिब व इकबाल तक की ग़ज़लों में भी मिलता है।

इक़बाल ने तो 'प्रीत' को 'परीत' लिखा है-

देखिये पाते हैं उश्शाक़ बुतों से क्या फ़ैज़
इक बरहमन ने कहा है कि ये साल अच्छा है। (३) ग़ालिब

''नया शिवाला'' नज़्म में इक़बाल

सच कह दूँ ऐ बरहमन गर तू बुरा ना माने
तेरे सनमकदों के बुत हो गये पुराने

और

शक्ति भी, शांति भी भक्तों के गीत में है।
धरती के बासियों की मुक्ति परीत में है।(४) इक़बाल

जब उर्दू के बड़े- बड़े शायर भाषा की सुविधानुसार छूट ले लेते हैं तो हिंदी में यह छूट दोष क्यों मानी जाए ? डॉ रामविलास शर्मा कहते हैं ''हिंदी में जंगल शब्द संस्कृत से आया किन्तु बहुवचन मे हिंदी मे जंगलानि नहीं होता है, तो फिर फ़ारसी की तर्ज़ पर उसका बहुवचन जंगलात ही क्यों हो ?(५) इसलिये जंगलों रूप ठीक है। डॉ० राजेन्द्र कुमार भी कहते है कि "भस्म और जन्म जैसे शब्द 'भसम' और 'जनम' हो गये तो 'फ़स्ल' और 'ज़ख़्म' के 'फसल' और 'ज़खम' होने पर आपत्ति क्यों ? (६) ये भाषा की ग़ल्तियां नहीं भाषा का विकास है। कवि कभी-कभी अपनी भाषा खुद गढ़ता, बनाता है। आज का शायर उस भाषा में लिखने पर ज़ोर देता है जिसे वह, इस्तेमाल करता है, बोलता है, जीता है, ओढ़ता बिछाता है।

मै जिसे ओढ़ता विछाता हूँ
वो ग़ज़ल आपको सुनाता हूँ।

दुष्यंत

यह 'ओढ़ना-बिछाना' जीवन से संपृक्ति है। शायर यह नहीं कह रहा कि जिसे मैं ख़्वाब में देखता हूँ वह अपनी जिंदगी की असलियत को जुबान दे रहा है।हिंदी ग़ज़ल का यह विशिष्ट लक्षण निश्चय ही हिंदी कविता से मिला संस्कार है। कमोबेश हिंदी ग़ज़ल अपनी समकालीन हिंदी कविता से भी प्रभावित हुई है। अज्ञेय ने घोषणा की थी कि 'ये उपमान मैले हो गये हैं' उसने अपनी प्रेयसी को चाँद नही 'बाजरे की कलगी कहा'। यह विद्रोह था। घिसे-पिटे, पुरातन, जीर्ण उपमानों के प्रति नयी सौन्दर्य दृष्टि का विद्रोह। यह वह समय था जब नया कवि स्पष्ट पूछने लगा था -

चाँदनी चंदन सदृश हम क्यों लिखें ?
मुख हमें कमलों सरीखे क्यों दिखें ?(७)

यह 'क्यों' कहना ग़ज़ल ने भी सीखा और अपनी क्यों का उत्तर भी मांगनें लगी। यह प्रखरता ग़ज़ल के स्वर में निश्चय ही पहले नहीं थी। पहले वह सुकुमार थी, सुन्दर थी किंतु सत्य की संवाहक नहीं थी। यदि हम उर्दू फारसी ग़ज़ल तथा बाद की हिंदी ग़ज़लकारों द्वारा लिखी गई ग़ज़लों में मूल भेद दिखाना चाहें तो पंत द्वारा रचित 'पल्लव' की भूमिका से शब्द उधार ले सकते हैं।जो पार्थक्य पंत ने ब्रजभाषा तथा ख़ड़ी बोली के मध्य दर्शाया है अद्‌भुत रूप से वही अंतर पुरानी ग़ज़ल तथा अब की ग़ज़ल में हैं। "उस सुकुमार मां के गर्भ से जो यह ओजस्विनी कन्या पैदा हुई आज सर्वत्र इसी की छटा है, इस की वाणी में विद्‌युत है हिंदी ने अब तुतलाना छोड़ दिया है वह 'पिय' को 'प्रिय' कहने लगी है उसका किशोर कण्ठ फूट गया .....वृक्ष विशाल तथा उन्नत हो गया, पदों की चंचलता दृष्टि में आ गई, वह विपुल विस्तृत हो गई। हृदय में नवीन भावनाऐं,नवीन कल्पनाएं उठने लगीं, ज्ञान की परिधि बढ़ गई ..... उसे चांद में नवीन सौन्दर्य, मेघ में

नवीन गर्जन सुनाई देने लगा है।"(८) चाँद भी वहीं है और मेघ भी वही है अंतर दृष्टि में आया है। मुक्तिबोध को चांद का मुँह टेढ़ा दिखाई दिया था क्योंकि चाँद जड़ सौन्दर्याभिरूचि का प्रतीक है, जो नये समय से अपना अर्थ नही दे पाता है। आर्मस्ट्रांग ने चाँद की पोल खोल दी। फिर किस का साहस होता कि वह अपनी प्रेयसी को चाँद कहे ? विज्ञान का प्रभाव, औद्योगीकरण, शहरीकरण, शिक्षा का असर, जीवन में मांग और आपूर्ति का बिगड़ा संतुलन, बहुत से कारण थे जिनसे साहित्यिक मूल्य, सौन्दर्य के मापदण्ड ही बदल गये।

जब तक ठण्डे चुल्हे पे खाली पतीली है
कैसे लिख दूं धूप फागुन की नशीली है।

यह 'कैसे लिख दूं' सवाल कवि अपनी अंतरात्मा से पूछ रहा है। यानि कवि अपनी जिम्मेदारी समझ रहा है। जब रोम जल रहा था तो नीरो बंसी बजा रहा था । आज के समय की परिस्थिति को देखते हुए अगर साहित्यकार नायिका भेद, नख-शिख वर्णन मे रत रहेगा तो यह साहित्य रचना नीरो की बंसी ही जान पड़ेगी। अदम गोण्डवी अपनी ग़ज़लों मे अपने समकालीन अदीबों को यही मशविरा देते हैं कि ख़्वाब की दुनिया से हक़ीक़त की दुनिया मे लौटआओ

"अदीबों, ठोस धरती की सतह पर लौट भी आओ
मुलम्मे के सिवा क्या है फ़लक के चाँद तारों में

धरती की सतह पर से तात्पर्य है यथार्थ की दुनिया! अदम गोण्डवी के एकमात्र प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह का शीर्षक भी यही है "धरती की सतह पर"। संग्रह का यह शीर्षक शायर की वर्गीय चेतना का पता भी देता है। शायर की जीवन दृष्टि आकाशीय या वायवीय न होकर धरती की सतह पर स्थित है। इस संग्रह की ग़ज़लों के समग्र अवलोकन से हम शायर की जीवन दृष्टि, उसकी सौन्दर्य-दृष्टि, उसकी वर्गीय चेतना तथा प्रतिबद्धता का आकलन कर सकते हैं।

अदम गोण्डवी की जीवन दृष्टि : जीवन दृष्टि रचयिता की रचना-प्रक्रिया को प्रभावित करती है। काव्य-रचना में कवि के मनोजगत् की बुनावट, उसके

संस्कार, उसकी कल्पना शक्ति और उसकी जीवन दृष्टि का बहुत बड़ा योगदान होता है। यही कारण है कि समान परिवेश मे रहने वाले रचनाकारों की रचनाऐं भी एक समान नहीं होती।अदम गोण्डवी की रचना प्रक्रिया को समझने का महत्वपूर्ण सोपान है 'उनकी जनजीवन से जुड़ी संवेदना और प्रतिबद्धधता'। जब संवेदना समाजिक सच्चाई के करीब और अनुकूल होती है तो निजबद्धधता विश्वदृष्टिकोण में बदल जाती है। इसके लिये संवेदना का विस्तार ज्ञान तक होना ज़रूरी है।कवि कविता में अपनी अनुभति को विवेक के माध्यम से ढालता है, यानि अनुभूति को ज्ञान में तब्दील करता है, अगर कवि अपनी अनुभूति से गहरे और ईमानदारी से जुड़ा होगा तो यह कविता क्रिया में, बल्कि क्रांति में भी तब्दील हो सकती है। शायर एक सजग नागरिक भी होता है अपने देशकाल से संपृक्त, परिस्थितियों के प्रति संवेदनशील, वह उन परस्थितियों का विवेचन-विश्लेषण तथा मूल्यांकन करता है। मूल्यांकन की इस प्रक्रिया मे उसकी संवेदना ज्ञान से जुड़ती है तथा सर्जनात्मक कल्पना को जन्म देती है सर्जनात्मक कल्पना का यह स्वरूप ही रचना बन कर प्रस्तुत होता है।

अदम गोण्डवी की ग़ज़लों में अनुभूति कोरी अनुभति नही है वरन् वह अनुभव से जुड़ी है यह अनुभव सैद्धान्तिक नहीं व्यवहारिक जीवनानुभव है।

मनोगत की वस्तुगत में, सिद्धांत की व्यवहार में, ज्ञान की कर्म में या कविता की क्रिया में तब्दीली एक जीवंत शायरी की विशेषता है। गोण्डवी जी की शायरी इन सभी पैमानों पर सच्ची शायरी है। यह यथार्थ से जुड़ी शायरी है। यह यथार्थ संवेदना से शुरू होता है। यथार्थ सिर्फ़ ब्यौरा नही है। संवदेनशील मन अपने आसपास के परिवेश को देखता है तथा उसमे फैली विसंगतिया उसे व्याकुल कर देती है। वह शोषित और शोषक के वर्ग भेद को देखता है तथा शोषित के पक्ष में खड़ा हो जाता है यह उसकी प्रतिबद्धता है। यह प्रतिबद्धता सिर्फ बाहरी तौर पर हो, आतंरिक रूप से नहीं तो कविता शब्द क्रीड़ा मात्र बन के रह जाएगी उस मे प्राण-प्रतिष्ठा संभव ही नहीं। हम पाते हैं कि यह प्रतिबद्धधता

गोण्डवी के जीवन और सृजन, कविता और कर्म दोनों में कूट-कूट कर भरी हुई है। यद्यपि वर्गीय रूप से कवि सवर्ण समाज से जुड़ा है किंतु चेतना के धरातल पर वह निम्न वर्ग के साथ है।उसकी वर्गीय चेतना उसके आंतरिक पक्ष मे फैली है। बाह्य वर्गगत चेतना के साथ-साथ उसकी एक वैयक्तिक चेतना भी विद्यमान है जो अपने वर्गीय मूल्यों का विरोध करती है तथा स्वयं अपने लिये अलग पथ बनाती हैं। कवि खुद सामंती जमींदार परिवार से संबंध रखता है किंतु आमंत्रण देता है चमारों के बीच से-

'आइये महसूस करिये ज़िंदगी के ताप का

मै चमारों की गली तक ले चलूंगा आप को

यह आमंत्रण देने से पूर्व कवि खुद ज़िंदगी के ताप को महसूस कर चुका है। कवि खुद किसान है और उसकी ग़ज़ल में हमें उसका शायर व्यक्तित्व किसान व्यक्तित्व से बिल्कुल जुदा नज़र नहीं आता। इनकी मूल मानसिक बनावट एक किसान की है। अवध के किसान के से सहज भाव बोध से वे अपना नज़रिया शायरी से व्यक्त करते हैं। वे बारिश को कवि की नहीं किसान की सी दृष्टि से देखते हैं।प्रेमचंद की तरह वे होरी, धनिया, गोबर की चिंता करते हैं।

इनका किसान खुशहाल नही है। प्रायः इनकी ग़ज़लों में ग़रीब किसान का चित्र मिलता है।

बंद कल को क्या किया मुखिया के खेतों में बेगार
अगले ही दिन एक होरी और बेघर हो गया। (९)

खेत जो सीलिंग के थे सब चक मे शामिल हो गये
हम को पट्टे की सनद मिलती भी है तो ताल में(१०)

बूढ़ा बरगद साक्षी है किस तरह से खो गई
रमसुधी की झोपड़ी सरपंच की चौपाल में (११)

या

फौरन खजूर छाप के परवान चढ़ गई
जो भी ज़मीन खाली पड़ी थी कछार में (१२)

शायर खुद भी किसान है।

एक हाथ में क़लम है और एक हाथ में कुदाल
बाबस्ता है ज़मीन से सपने अदीब के (१३)

हर समय में हर गांव से कोई न कोई गोबर लखनऊ जाता ही रहता है । शायर उसकी ख़ैरियत जानने के लिये उत्सुक है।

हमारे गांव का गोबर तुम्हारे लखनऊ में है
जवाबी खत में लिखना किस मुहल्ले का निवासी है। (१४)

एक लंबी नज़्म 'चमारोंकी गली' में गांव का एक बहुत ही 'आम सीन' प्रस्तुत किया है जिसमे एक प्रतिनिधि सामंत जमींदार का वर्णन है।

"पड़ गई इसकी भनक थी, ठाकुरों के कान में
वे इकट्ठें हो गये सरपंच की दालान में
दृष्टि जिसकी है जमी भाले की लंबी नोक पर
देखिये, सुखराज सिंग बोले हैं खैनी ठोक कर
क्या कहें सरपंच भाई, क्या ज़माना आ गया
कल तलक जो पांव के नीचे था रूतबा पा गया
कहती है सरकार कि आपस में मिलजुल कर रहो
सुअर के बच्चों को अब कोरी नहीं हरिजन कहो" (१५)

'यहां सुअर के बच्चे' शब्द कोरी जाति के लिये इस्तेमाल किया गया है निश्चय ही यह अपमान जनक है किंतु हर गांव मे 'सुखराज सिंग' यही भाषा बोलते है। कवि सरपंच की दालान में नहीं चमारो की गली मे खड़ा है वह पूंजीपतियों की नहीं, बुद्धि जीवियों की नहीं, सर्वहारा की महत्ता प्रतिपादित करता है

"न महलों की बुलंदी से, न लफ़्जों के नगीने से
तमद्दुन मे निखार आता है घीसू के पसीने से "

वह जानता है कि शहर के फूलों की सुर्खी मे गांव का लहू ही चमक रहा है कैफ़ी आज़मी ने भी कुछ ऐसा ही कहा है

उदासी गाँव की कहती तो होगी शहरों से
मेरे गुलों का लहू भी तेरे निखार में है

अदम गोण्डवी भी कहते हैं।

सुर्ख़ी है मेरे खूँ की इन लॉन के फूलो में
इस तल्ख़ हक़ीक़त को क्यूं आप छुपाऐ है (१६)

बहुत गर्व के साथ वह बताता है कि 'ऐ शहर के बाशिंदों हम गाँव से आए हैं' उसे अपने गाँव से प्यार है। वह अपने गाँव और अपनी ग्रामीणता पर गर्व करता है। अपने गाँव का वर्णन करता है अपने गाँव की चिंता करता है

जो उलझ कर रह गई है फाइलों के जाल में
गाँव तक वो रोशनी आएगी कितने साल में ?(१७)
तुम्हारी फाइलों में गाँव का मौसम गुलाबी है
मगर ये आंकडे झूठे हैं ये दावा किताबी है । (१८)
अदब इदारों में महदूद है बजा लेकिन
गांव के लहजे की अपनी मिठास होती है। (१९)

कविवर सोहनलाल द्विवेदी की कविता है :-

पुरई -पालों खपरैलों मे
रहिमा - रमुआ की नावों में
है अपना हिंदुस्तान कँहा
वो बसा हमारे गाँवों में ।

भारत की ८० प्रतिशत जनता गाँवों में बसती है। अदम गोण्डवी इसी ८० प्रतिशत जनता के प्रतिनिधि शायर है। इसलिये जब ये गाँव की बात करते हैं तो अपने आसपास की बात कर रहे होते हैं।

शहर के प्रति कवि की धारणा अच्छी नही है। यद्यपि यह प्रवृत्ति ग्रमीण ही नहीं शहरी कवियों की भी रही है कि वे गाँव को 'बहुत अच्छा' और शहर को 'बहुत बुरा' मानते है। 'सांप' कविता में अज्ञेय सांप से पूछते हैं —

''सांप तुम सभ्य तो हुए नहीं
नगर में बसना भी तुम्हें नही आया
एक बात पूंछू उत्तर दोगें ?
कहां सीखा डंसना, विष कहाँ पाया ?(२०)

नरेन्द्र मोहन ने शहर की तुलना धृतराष्ट्र से की है

शहर धृतराष्ट्र है
कुछ नही दीखता इसे
सूर्य, बादल, नदी, पेड़
चिड़ियां, पत्तियां और इंसान (२१)

शहर में सड़क वर्कशाप है
और आदमी टूल है।
हाथ रोटी ढूंढ रहे हैं,
ऑखें घर तलाश रही हैं, (२२)

सोम अधीर

प्रलय का आरंभ शहर से होगा,
काना दज्जाल शहर में ही पैदा होगा। (२३)

असद ज़ैदी

इन उदाहरणों में स्पष्ट होता है कि नये कवियो में शहर बेगानेपन और मूल्यहीनता का सूचक है। कवियों को शहर में कोई अच्छाई नज़र नहीं आयी है। शहर विविधता मे एकता की मिसाल है, ज्ञान विज्ञान का केंद्र है, उद्योग धंधों का निर्माता है, मिश्रित संस्कृति का जन्मदाता है, सहनशीलता, विकास का माध्यम हैं और विश्व की तरफ खुलने वाली खिड़की भी है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि शहर की बुराईयां गांवों में भी आसानी से नज़र आती है फिर भी कवि गांव के प्रति बड़ी आत्मीयता जताते हैं क्योंकि गांव मे छल कपट नही होता है। यद्यपि सुविधाऐं नही होती है और समस्याएं बहुत होती है किंतु गांव वालों के अपनत्व की भावना कवि को गांव की तरफ़ खींचती है।

बहुत दिनों के बाद
अब की मैं जी भर छू पाया
अपनी गंवई पगडण्डी की
चंदनवर्णी धूल
बहुत दिनों के बाद — नागार्जुन

अदम गोण्डवी की ग़ज़ल में भी गांव दिलकश है

ग़ज़ल को ले चलो अब गांव के दिलकश नज़ारों में
मुसलसल फ़न का दम घुटता है अब अदबी एदारों में

वे शहर की भर्त्सना करते हैं-

तुम्हारे शहर की दिलकश जवान गलियो में
ज़िंदगी फिरती है बेवा का मुकद्दर लेकर
उरियानियत में पीछे हम आप से नही है
तुम शौक से नंगे हो हम ग़म के सताए है।

मगर अदम गोण्डवी की शायरी की सबसे बड़ी विशेषता हम देखते हैं कि वह गांव की पूजा तो करते है मगर उन्होंने गांव का जो चित्र पेश किया है वह बिल्कुल यथार्थ चित्र है उनका गाँव कवि की कल्पना का गाँव नहीं है जहां दूध - घी की नदियाँ बहती हों, आम के बाग़ हों, कोयल कूकती हों, दादी कहानी सुनाती हों और बच्चे मस्ती से खेलते हों, ऐसे गुलाबी गाँव, को वे झूटा बताते है।

— तुम्हारी फाइलों में गाँव का मौसम गुलाबी है
मगर ये आंकड़े झूठे हैं, ये दावा किताबी है
— गांव के पनघट की रंगीनी बयां कैसे करें
भुखमरी की धूप से दिलगीर है मेरी ग़ज़ल
— आप आऐं तो कभी गाँव की चौपालों पर
मैं रहूँ या न रहूँ भूख मेज़बां होगी।

इन चंद उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि अदम गोण्डवी का गाँव, ठेठ भारत का गाँव है इसे अवध का ब्रज का, बिहार का या मध्य-प्रदेश का, कहीं का भी गाँव समझ लीजिये। अपनी नज़्म 'चमारों की गली' में शायर ने गाँव के ठाकुर और चमार के माध्यम से एक कटु सामाजिक सत्य उजागर किया है। इनका तखल्लुस 'गोण्डवी' लगाना ही अपने अंचल अपने जनपद से जुड़ाव का परिचायक है।

अदम गोण्डवी की शायरी में राजनीति - कुंभनदास ने कहा था "संतन को कहा सीकरी सों काम"(२४) लेकिन आज के कवि का काम 'दिल्ली' के बिना नहीं चल सकता।जनजीवन से जुड़ा हुआ कवि राजनीति से उदासीन नही रह सकता । साहित्य समाज से प्रभावित होता है और समाज राजनीति से । इस तरह आम जनता भी राजनीति से जुड़ी हुई है।

मुक्तिबोध साहित्य और राजनीति के संबंध पर ज़ोर देते हुए कहते है "जनता की राजनीति और जनोन्मुख साहित्य का स्रोत एक ही है, वह है आज का यथार्थ, आज का यथार्थ कोई रहस्यवादी धारणा नही है, जिसको समझने के लिये इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना आदि नाड़ियों को तीव्र करना ज़रूरी हो, यदि हमारी काव्य प्रेरणा वस्तुतः जनजीवन से उद्‌भुत हुई हो तो जनजीवन की वर्तमान परिस्थितियों और कष्टों का कारण भी हमारी अनुभूति क्षेत्र का अंग होगा। राजनीति और साहित्य मात्र अभिव्यक्ति में भिन्न है उनका मूल है आज का यथार्थ यानि जनजीवन का यथार्थ उसके लक्ष्य उसके अभिप्रेत उसके संघर्ष"।(२५)

चूंकि राजनीति सारी व्यवस्था की धुरी है अतः व्यवस्था का विरोध भी करना है तो भी राजनीति को समझना ज़रूरी है। सामाजिक अन्याय के विरूद्ध गोण्डवी आक्रोश व्यक्त करते हैं, व्यवस्था पर व्यंग्य करते हैं निंदा करते हैं तथा इंकलाब में यक़ीन रखते हैं।

सौ में सत्तर आदमी फिलहाल जब नाशाद है
दिल पे रख कर हाथ कहिये देश क्या आज़ाद है?(२६)

मुल्क जाए भाड़ में इससे उन्हें मतलब नहीं
एक ही ख़्वाहिश है कि कुनबे मे मुख़्तारी रहे। (२८)

ख़ुदा का वास्ता देकर किसी का घर जला देना
ये मज़हब की वफ़ादारी हक़ीक़त में सियासी है। (२९)

उधर जम्हूरियत का ढोल पीटे जा रहे है वो
इधर पर्दे के पीछे बर्बरीयत है नवाबी है (३०)

पर्दे के पीछे की नवाबी का विरोध ही इनकी मुख्य राजनीतिक चेतना है। इनकी शायरी में राजनेताओं पर खुला निर्भीक व्यंग्य होता है।

अन्य कवियों के यहाँ भी राजनीति पर व्यंग्य मिलता है

आओं रानी हम ढोएंगे पालकी

यही हुई है राय जवाहरलाल की (३१)

कुछ और उदाहरण देखिये

खटे न कभी मिल में

करे न कताई

रानी की देह पर है रेशमी रज़ाई (३२)

न कोई प्रजा है न कोई तंत्र है

यह आदमी के ख़िलाफ़

आदमी का खुला षड़यंत्र है (३३)

दुष्यंत तो सपाट शब्दों में कहते हैं

तू न समझेगा सियासत तू अभी इंसान है! (३४)

'अभी इंसान है' यानि इंसानियत और राजनीति एक साथ नहीं चल सकते।

राजनेताओं मे जिस तरह सत्ता लोलुपता बढ़ती जा रही है, खादी के लिबास और गांधी टोपी के पीछे जो असलियत छुपी होती है। उसे कवि देख रहा है।

पक्के समाजवादी हैं तस्कर हो या डकैत

इतना असर है खादी के उजले लिबास में

काजू भुने पलेट में व्हिस्की गिलास में

रामराज्य उतरा है विधायक निवास में (३५)

गाँधी जी और गाँधीवाद के भुनाने पर कवि की दृष्टि देखिये कि नये नेता गाँधी के नाम को कैसे भुना रहे है।

ऐबपोशी के लिये चादर है गाँधी वाद की
नंगा होने के लिये रजनीश का हम्माम है (३६)
इधर इक दिन की आमदनी का औसत है चवन्नी का
उधर लाखों में गाँधी जी के चेलों की कमाई है। (३७)

इस देश में गाँधी जी को कोई भूला नहीं है, लेकिन याद भी किसे है।

गाँधी जी आज भी ज़िंदा हैं
नेताओं की टोपी में
चंदों की गुल्लक मे
दो अक्तूबर की छुट्टी में (३८)
सौंवी बरसी मना रहे हैं तीनों बंदर बापू के
बापू को ही बना रहे हैं तीनों बंदर बापू के (३९)

गाँधी को लोगों ने ढाल बना लिया है।गाँधी जी ने आज़ादी तो दिलादी लेकिन उसके बाद देश न गाँधीवाद कों संभाल सका न आज़ादी को।

यशपाल ने अपने उपन्यास 'झूठा सच' में आज़ादी को झूठा सच बताया है। स्वतंत्रता मिलने से भारत की जनता ने जो उम्मीदें लगा रखी थी स्वतंत्रता के बाद जब कुछ नही बदला तो मोहभंग तो होना ही था। सरदार जाफ़री पूछते हैं

कौन आजाद हुआ?
किसके माथे से गुलामी की सियाही छूटी?
मेरे सीने में अभी दर्द है महकूमी का
मादरे-हिंद के चेहरों पे उदासी है वही।

फ़ैज़ अफसोस के साथ कहते हैं

वो इंतज़ार था जिसका ये वो सहर तो नहीं (४०)

इंतज़ार तो पता नही किस किसका था कितना कुछ तय था लेकिन मिला क्या?

कहाँ तो तय था चिराग़ां हरेक घर के लिये
कहाँ चिराग़ मयस्सर नहीं शहर के लिये (४१)
क्या आज़ादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया ढोता है (४२)
आज़ादी का ये जश्न मनाएं तो किस तरह
जो आ गया फुटपाथ पर घर की तलाश में (४३)
नंगी पीठ हो जाती है जब हम पेट ढकते हैं
मेरे हिस्से की आज़ादी भिखारी के क़बा सी है (४४)

एक और शायर का इसी से मिलता हुआ शेर देखिए

हमें उनसे शिकायत है कि दी है चादरें छोटी
वो कहते है कि तुमको पाँव फैलाने नहीं आते।

आज़ादी मिलने पर भी देश भूख, बेकारी, शोषण, अभावों, भ्रष्टाचार से आज़ाद नही हो सका फिर आज़ादी का क्या मतलब? आम आदमी के लिये ऐसी आज़ादी मायने नही रखती । यह आज़ादी नेताओं के लिये मायने रखती है क्योंकि सत्ता हस्तान्तरण का सुख उन्हें मिला है, जनता को नहीं। जनचेतना से जुड़ा क्रांतिकारी कवि ऐसे में जनता को वर्ग संघर्ष की, बग़ावत की प्रेरणा देता है। वह इंक़लाब में यक़ीन रखता है

जनता के पास एक ही चारा है बग़ावत
ये बात कहु रहा हूँ मैं होशो हवास में (४५)
अब टूट गिरेंगी ज़ंजीरे अब ज़िंदानों की ख़ैर नहीं
जो दरिया झूम के उट्ठेंगे तिनकों से न टाले जाएंगें (४६)

नया चश्मा है पत्थर के शिगाफ़ों से उबलने को
ज़माना किस क़दर बेताब हैं करवट बदलने को (४७)
दबेगी कब तलक आवाज़े-आदम हम भी देखेंगें
जबीने-कज कुलाही ख़ाक पर ख़म हम भी देखेंगे
तुम्हें भी देखना होगा ये आलम हम भी देखेंगें (४८)

शायर की क्रांतिधर्मा चेतना ठहराव पसंद ही नही करती फ़िराक़ जिंदगी को पैहम इंक़लाब मानते हैं

इसमें ठहराव या सुकून कहाँ
जिंदगी इंक़लाबे-पैहम है

अदम गोण्डवी भी इसी से प्रभावित है

तर्क कर तन्क़ीद के जज़्बे को मर जाती है क़ौम
जुर्म है ठहराव अब रफ़्तार की बातें करो (४९)

गोण्डवी शासन को क्रांति की पूर्व सूचना भिजवा रहे हैं

बम उगाएंगे 'अदम' दहक़ान गंदुम के एवज़
आप पहुँचा दें हुकूमत तक हमारा ये पयाम (५०)

दुष्यंत क्रांति की लपटों के सुरक्षित रहने की बात करते हैं चाहे वहमेरे सीने में हो या तेरे सीनें में

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही
हो कही भी आग लेकिन आग जलनी चाहिये (५१)

गोण्डवी भी आपके सीने में चिंगारी महफ़ूज़ रखना चाहते हैं।

जिसकी गर्मी से महकते है बग़ावत के गुलाब
आपके सीने में वह महफ़ूज चिंगारी रहें (५२)

बग़ावत के जोश में वह सब कुछ फूंक देने के लिये तैयार है। शायर जनता की शक्ति को पहचानता है।

सरबलंद मुल्क की रौनक ये तेरे रंगमहल
जल के रह जाए बग़ावत का अगर फूल खिले (५३)

शायर का बिद्रोही स्वभाव समाज में जब कभी विसंगति देखता है तो तिलमिला उठता है।

जी में आता है आईन को जला डालूं
भूख से जब मेरी बच्ची उदास होती है(५४)

शायर की यह तिलमिलाहट वाजिब है। जब वह देखता है कि एक तरफ़ खाने को भी नहीं मिलता है दूसरी तरफ़ अंधाधुंध बर्बादी हो रही है, ऐयाशी के सामान मौजूद हैं तो उस की चेतना बग़ावत कर उठती है।

है इधर फ़ाक़ाकशी से रात का कटना मुहाल
रक़्स करती है उधर स्कॉच की बोतल में शाम (५५)
इक हम हैं भुखमरी के जहन्नुम में जल रहे
इक आप हैं दोहरा रहे किस्से नसीब के! (५६)
जो बशर मुल्क की तक़दीर की तामीर करें
आज फुटपाथ के साये में उसकी रात ढले (५७)
तुम्हारी मेज़ चांदी की तुम्हारे जाम सोने के
यहाँ जुम्मन के घर में आज भी फूटी रकाबी है। (५८)

शायर इन सोने के जामों और फूटी रकाबी के बीच के अंतर को पाटने के लिये प्रतिबद्ध है।

भूख के अहसास को शेरों सुखन तक ले चलो
या अदब को मुफ़लिसों की अंजुमन तक ले चलो। (५९)

क्योकि जब तक अदब की दुनिया भूख की दुनिया से वाकिफ़ नहीं होगी उसकी नक़ली चमक दमक बनी रहेगी।

वो स्लम बस्ती के बाड़े मे अगर इक रात भी ठहरें
अमीरो के हंसी ख़्वाबों का शीराज़ा बिखर जाऐ।(६०)

भूखा पेट सभ्यता और संस्कृति कुछ नहीं जानता।'साहिर' ने कहा है

नूरे सरमाया से है नूरे-तमद्दून की जिला
हम जहाँ है वहाँ तहज़ीब नहीं पल सकती
मुफ़लिसी हिस्से-लताफत को मिटा देती है
भूख आदाब के सांचे में नहीं ढल सकती है (६१)

इसी 'तमद्दुन' की असलियत अदम जानते है तथा उसके चीर हरण की चिंता करते हैं।

बरहना हो न जाएं ये अदम पछुआ के झोंकों से
हमारी इस तमद्दुन का ग़रारा कितना ढीला है। (६२)

यहां ग़रारा तथाकथित अभिजात्यता का प्रतीक है। पूंजीवाद इस 'ग़रारे' को पकड़ कर रखने की कोशिश करता है और शायर चाहता है कि ये खुल ही जाएं। सभ्यता और संस्कृति के तथाकथित पक्षधर इसके ढंके रहने में ही इज़्ज़त समझते हैं। जैसे यशपाल की कहानी 'परदा' में घर का मालिक पर्दे को बचाने की कोशिश में है। अंदर चाहे सब कुछ नंगा हो किंतु एक बाह्यावरण ज़रूरी है। यथार्थवादी साहित्यकार इस छद्मावरण को अनावश्यक ही नहीं ग़लत समझता है, इसे हटाना चाहता है।

जलते इंसान की बदबू से हवा बोझल है
फिर भी इसरार हैं मौसम को खुशगवार कहें (६३)

अदम गोण्डवी इस इसरार को पूरा नहीं करते। बल्कि पूरा करने वालों को गाली देते हैं।

भुखमरी की रूत में नग़में लिख रहे हैं प्यार के
आज के फ़नकार भी है दोग़ले किरदार के (६४)

सौन्दर्य दृष्टि

अदम गोण्डवी की इस विचार धारा को देखकर (जिससे कि वह प्यार के नग़मे लिखने वालों को गाली देते हैं) प्रतीत होता है कि शायर प्रेम का घोर विरोधी है। भूख की अपनी हक़ीक़त है लेकिन प्रेम इतना उपेक्षणीय भी नहीं! तब अगर गोण्डवी 'प्रेम' करने वालों या प्रेम' लिखने वालों को समाज विरोधी मानते है तो निश्चय ही उनकी सौन्दर्य - दृष्टि पूर्वाग्रह से ग्रस्त है! गोण्डवी की तमाम उपलब्ध ग़ज़लों से एक भी ग़ज़ल 'प्रेम' पर नही है। उनकी ग़ज़लों में सिर्फ़ "रोटी कपड़ा और मकान" है। शायर प्यार को घृणित दृष्टि से देखता है उसे 'जिस्म की भूख और 'हवस' का ज्वार कहता है। यहां ऐसा लगता है जैसे वह प्रकृतिवादी है जिसे दुनिया में सब भद्दा, कुरूप और भदेस पहले देखने की आदत है।

जिस्म की भूख कहें या हवस का ज्वार कहे
सतही जज़्बे को मुनासिब नही है प्यार कहें (६५)

शायर खुद को 'फ़क़ीर' कहता है शायद इसलिये प्रेम से दूर भागता है। ख़ुद को फ़क़ीर तो मीर ने भी कहा था लेकिन उसे तो पत्ते - पत्ते बूटे-बूटे से प्यार था

हम फ़क़ीरों की न पूछों मुत्मईन वो भी नहीं
जो तुम्हारे गेसुए-ख़मदार के साये में है (६६)

अदम

हम फ़क़ीरो से बेअदाई क्या
आन बैठे जो तुम ने प्यार किया (६७)

मीर

यहाँ पर हमें गोण्डवी कुछ अतिवादी लगते हैं

अब किसी लैला को भी इक़रारे-महबूबी नहीं
इस अहद मे प्यार का सिंबल तिकोना हो गया। (६८)

शायर की अंतश्चेतना असुरक्षा के भाव से ग्रस्त मालूम होती है।

भुखमरी की ज़द में है या दार के साये में है
अहले हिंदुस्तान अब तलवार के साये में है
बेबसी का इक समन्दर दूर तक फैला हुआ
और कश्ती काग़जी पतवार के साये में है (६९)
जुल्फ, अंगड़ाई, तबस्सुम, चाँद, आईना, गुलाब
भुखमरी के मोर्चे पर ढल गया इनका शबाब
पेट के भूगोल में उलझा हुआ है आदमी

इस अहद में किस को फुर्सत है पढ़े दिल की किताब। (७०)

अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का मुकम्मल अध्ययन करनके पर पता चलता है कि शायर ज़िंदगी को शायर की नहीं 'घीसू' की नज़र से देखता है। जो पेट के भूगोल में उलझा हुआ है! गोण्डवी की ग़ज़लें आम आदमी की नहीं आम आदमी से एक दर्जा नीचे 'ग़रीब आदमी' की ग़ज़लें हैं|आम आदमी की चादर मे 'दुख का ताना सुख का बाना' है लेकिन ग़रीब आदमी के पास तो चादर ही नही है। जहां ज़िंदगी मौत से भी बदतर है

हम गरीबों की नज़र मे इक क़हर है ज़िंदगी
मौत के लम्हात से भी तल्ख़तर है ज़िंदगी (७१)

इसलिये गोण्डवी की ग़ज़ल खुद स्पष्टीकरण देती है कि

गाँव के पनघट की रंगीनी बयां कैसे करें
भुखमरी की धूप से दिलगीर है मेरी ग़ज़ल। (७२)
मेरी नज़्मों में मशीनी दौर का अहसास है
भूख के शोंलों मे जलती कौम का इतिहास है

इस तरह हम देखते है कि गोण्डवी की सौन्दर्य-दृष्टि क्षीण नही है, लेकिन वह पेट की बग़ावत के आगे क्षीण पड़ जाती है क्योंकि वह रोमैण्टिक शायर की नही घीसू की सौन्दर्य-दृष्टि है।

वो रोज़े-ताज जिसको हुस्न की मीनार कहते है
यहां घीसू की नज़रों में वो इक पत्थर का टीला है (७३)

हमेशा से देश-विदेश मे ताजमहल प्रेम का प्रतीक माना जाता रहा है लेकिन —

सिर्फ़ शायर जानता है क़हक़हों की असलियत
हर किसी के पास तो ऐसी नज़र होती नहीं (७४)

शायर उसे बनवाने वाले की नहीं बनाने वाले की नज़र से देखता है और बनाने वाले गरीब मज़दूरों को तो वह पत्थर का टीला ही नज़र आएगा। पंत ने ताज को विशुद्ध मानवतावादी दृष्टिकोण से देख कर इस शव पूजा माना।

शव को हम रंगरूप आदर दें मानव का
मानव को हम कुत्सित चित्र बना दें शव का

साहिर ने ताज को अमीरों के प्रेम का विज्ञापन कहा

एक शहन्शाह ने बनवा के हंसी ताजमहल
हम ग़रीबों की मुहब्बत का उड़ाया है मज़ाक़।(७५)

ताजमहल जैसी खूबसूरत इमारत के प्रति कवियों की यह उपेक्षापूर्ण दृष्टि बीमार मानसिकता का पर्याय नही है बल्कि हक़ीक़त है. तल्ख़ हक़ीक़त! भूखे पेट को करोड़ों का ताजमहल पत्थर का टीला नज़र आएगा और चाँद रोटी

तख़य्युल मे तेरे चेहरे का ख़ाका खींचने बैठे
बड़ी हैरत हुई कि अक्स रोटी के उभर आएं (७६)

बरसों पहले नज़ीर अकबराबादी ने भी रोटी का गुणगान कुछ इसी तरह किया था

रोटी न हो जो पेट मे तो कुछ जतन न हो
मेले की सैर ख्वाहिशे-बाग़ों-चमन न हो
भूखें ग़रीब दिल की ख़ुदा से लगन न हो
सच है कहा किसी ने कि भूखे भजन न हो
अल्लाह की भी याद दिलाती है रोटियां

रोटी की महत्ता के आगे शायर नतमस्तक है! अपनी एक अन्य नज़्म 'मुफ़लिस' मे नज़ीर ने भूखे आदमी का बड़ा ही वहशतनाक चित्र खींचा है।

हर आन टूट पड़ता है रोटी के ख़्वान पर
जिस तरह कुत्ते लड़ते हैं एक उसतख़ान पर।

आदमी के जानवर मे तब्दील होने की घटना जितनी शर्मनाक है उतनी ही सत्य भी! प्रेमचंद की कहानी 'कफ़न' मे भी यही घटना है। नागार्जुन 'अकाल और उसके बाद' कविता में घर में कई दिनों बाद दाने आने पर कौवे, छिपकली, चूहें सब को प्रसन्न दिखाते है

चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद।

रोटी को केदारनाथ सिंह ने दुनिया की सबसे आश्चर्यजनक चीज़ कहा है "मैं ने जब भी उसे तोड़ा है। मुझे हर बार वह पहले से ज़्यादा स्वादिष्ट लगी है" (७७)

यदि हमारा देश कृषि प्रधान देश है फिर भी 'रोटी' आदमी का स्वप्न है।

हमारा स्वप्न है दो जून की रोटी
हमारे स्वप्न अम्बर तक नहीं पहुंचें। (७८)

उपरोक्त कुछ उदाहरणों के आलोक में हम देखते है कि शायर प्यार के

नग़मे गा सकता है लेकिन अपने परिवेश को देख कर उसकी आत्मा उसे ऐसे नग़में गाने से रोकती है

"मेरे सरकश तराने सुनके दुनिया ये समझती है
कि शायद मेरे दिल को इश्क़ के नग़मों से नफ़रत है
मुझे हंगामा-ए- जंगो- जदल मे कैफ़ मिलता है
मेरी फ़ितरत को खूंरेज़ी के अफ़सानो से रग़बत है
मैं शायर हूँ मुझे फ़ितरत के नज़्जारों से उल्फ़त है
मेरा दिल दुश्मने- नग़मा सराई हो नही सकता
मुझे इंसानियत का दर्द भी बख़्शा है कुदरत ने
मेरा मक़सद फ़क़त शैला नवाई हो नही सकता
मेरे सरकश तरानो की हक़ीक़त है तो इतनी है
कि जब मैं देखता हूँ भूक के मारे किसानों को
ग़रीबों, मुफ़लिसों को. बेकसों को बेसहारों कों
हुकूमत के तशद्दुद को, अमारत के तकब्बुर को
किसी के चीथड़ों को और शहंशाही खज़ानों को
तो दिल ताबे-निशाते- बज़्में- इश्रत ला नहीं सकता
मैं चाहूं भी तो ख़्वाब आवर तराने गा नहीं सकता" (७६)

साहिर की नज़्म के माध्यम से हमअदम गोण्डवी की शायरी के विषयों, उनकी सौन्दर्य-दृष्टि का उत्स पता कर सकते है। प्रेम के गीत लिखना अगर सिर्फ़ तुक मिलाने का नाम है तो कोई भी शायरी कर सकता है। लेकिन जहाँ शायरी शब्द- क्रीड़ा या शब्द- विलास मात्र नहीं आत्माभिव्यक्ति का साधन है, तो शायर के लिये बिना उससे जुड़ें प्रेम गीत लिखना मुश्किल हो जाएगा।

गोण्डवी कहते है

खिले है फूल कटी छातियों की धरती पर
फिर मेरे गीत मे मासूमियत कहाँ होंगी (८०)

संदर्भ

1. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर, ग़ज़ल सं.--9.
2. वही, कवआत
3. दीवाने ग़ालिब, राजकमल प्रकाशन पृ.--130
4. इकबाल की शायरी, हिन्द पाकेट बुक्स, पृ.--28
5. धर्मयुग, नवम्बर, 1980 पृ.--19
6. वही, पृ.--19
7. अजीत कुमार, कवियों का विद्रोह कविता में
8. सुमित्रानन्दन पंत - पल्लव, पृ.--1.
9. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर, ग़ज़ल सं.--6
10. वही, ग़ज़ल सं.--5
11. वही, ग़ज़ल सं.--5.
12. वही, ग़ज़ल सं.--27.
13. वही, ग़ज़ल सं.--21.
14. वही, ग़ज़ल सं.--10.
15. वही, चमारों की गली, नज्म से
16. वही, ग़ज़ल सं.--35.
17. वही, ग़ज़ल सं.--5.
18. वही, ग़ज़ल सं.--14.
19. वही, ग़ज़ल सं.--29.
20. अज्ञेय - सर्जना के क्षण, पृ.--46.
21. एक अग्नि काण्ड जगहें बदलता हुआ, पृ.--45.
22. नवगीत सहादशक (संकलन - डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) पृ.--95.
23. बहनें और अन्य कविताएँ पृ.--81.
24. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आचार्य शुक्ल से उद्धृत, पृ.--112.
25. मुक्ति बोध - नया खून, 26 जनवरी, 1951

26· अदम गोण्डवी, धरती की सतह पर ग़ज़ल सं·- 3
28· वही, ग़ज़ल सं·- 7
29· वही, ग़ज़ल सं·- 10
30· वही, ग़ज़ल सं·- 14
31· नागार्जुन की प्रतिनिधि कविताएँ पृ·-101.
32· शान्ति सुमन - मौसम हुआ कबीर, पृ·-23.
33· धूमिल - संसद से सड़क तक पृ·-129.
34· साये में धूप पृ·-27.
35· अदम गोण्डवी ग़ज़ल सं·- 26
36· वही, कत्आत
37· वही, ग़ज़ल सं·- 20
38· शशि शर्मा, जंगल से गुजरता शहर, पृ·-49
39· नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ पृ·-109
40· फ़ैज़ - प्रतिनिधि कविताएँ (सुब्हे-आज़ादी नज़्म) पृ·-
41· दुष्यंत कुमार, साये में धूप पृ·-13
42· धूमिल, संसद से सड़क तक पृ·-50.
43· अदम गोण्डवी, धरती की सतह पर, ग़ज़ल सं·-26.
44· वही, ग़ज़ल सं·- 10
45· वही, ग़ज़ल सं·- 26
46· फ़ैज़ की शायरी, डायमण्ड प्रकाशन पृ·-सं·-105.
47· सरदार जाफ़री (राजपाज एण्ड सन्स) पृ·- 5
48· साहिर - जीवनी और संकलन पृ·-82
49 अदम गोण्डवी, धरती की सतह पर ग़ज़ल सं·-12
50· वही, ग़ज़ल सं·-44
51· दुष्यंत कुमार - साये में धूप पृ·-30.
52· अदम गोण्डवी, धरती की सतह पर, ग़ज़ल सं·-7
53· वही, ग़ज़ल सं·-40

54. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर — ग़ज़ल सं.-29
55. वही, — ग़ज़ल सं.-44
56. वही, — ग़ज़ल सं.-
57. वही, — ग़ज़ल सं.-40
58. वही, — ग़ज़ल सं.-14
59. वही, — ग़ज़ल सं.-2
60. वही, — ग़ज़ल सं.-25
61. साहिर - जीवनी और संकलन, — पृ.-63
62. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर — ग़ज़ल सं.-15
63. वही, — ग़ज़ल सं.-18
64. वही, — कत्आत
65. वही, — ग़ज़ल सं.-18
66. वही, — ग़ज़ल सं.-9
67. दीवाने-मीर - राजकमल प्रकाशन, — पृ.-7.
68. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर — ग़ज़ल सं.-8
69. वही, — ग़ज़ल सं.-9
70. वही, — ग़ज़ल सं.-4
71. वही, — ग़ज़ल सं.-39
72. वही, — ग़ज़ल सं.-30
73. वही, — ग़ज़ल सं.-15
74. दुष्यंत कुमार - साये में धूप — पृ.-51
75. साहिर जीवनी और संकलन — पृ.-42
76. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर — ग़ज़ल सं.-25
77. केदारनाथ सिंह - प्रतिनिधि कविताएँ — पृ.-39
78. ज़हीर कुरेशी - चांदनी का ज़हर — पृ.-50
79. साहिर जीवनी और संकलन — पृ.-79-80
80. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर — ग़ज़ल सं.-47.

'अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का शिल्प'

इटली के सौन्दर्य शास्त्री और दार्शनिक बेनेदितो क्रोचे ने रचना के विवेचन विश्लेषण को बिल्कुल अनुचित माना है, तथा उसके तत्वों को अलग-अलग करके देखना कृति की हत्या कर देना बताया है।[1] ग़ज़ल के शिल्प का ... तात्विक विवेचन साहित्यिक कम गणितीय कार्य ज़्यादा लगता है, क्योंकि ग़ज़ल में पुरानी रूढ़ियाँ यथावत् चलती आ रही हैं, स्वरूप की दृष्टि से रदीफ़ तथा काफ़िये से ग़ज़ल सुसज्जित होनी चाहिये, उसके सभी शेर एक ही वज़न तथा एक ही बहर में लिखे होने चाहिये। शेर में रूक्न (वर्ण) की गिनती का ध्यान होना चाहिये और बहर मे वर्ण, मात्रा, लय, गति यति ठीक होनी चाहिये। इनके अलावा काफ़िये में तुकांत भी व्यंजन के आधार पर नही स्वर के आधार पर रखना चाहिये।

इस तरह ग़ज़ल का शिल्प बड़ा ही निर्धारित शिल्प है जिस में तयशुदा स्वरूप से ज़रा भी विचलन ग़ज़ल के स्वभाव को बर्दाश्त नही।

इसलिये जहां तक ग़ज़ल के शिल्प के अध्ययन में इन तकनीकी सूक्ष्मताओं की बात है वे हर ग़ज़ल मे समान ही मिलेंगी इन में ग़ज़लकार कोई नवीनता नही भर सकता, फिर भी शिल्प का अध्ययन रचनाकार के संवेदनात्मक उद्देश्य को जानने के लिये ज़रूरी है। क्योंकि ''रचना प्रक्रिया का नियामक तत्व संवेदनात्मक उद्देश्य है। इस उद्देश्य का रचना प्रक्रिया पर, शिल्प पर असर पड़ता है वाक्य-विन्यास, शब्द-चयन, मुहावरा सब कुछ इसी संवेदनात्मक उद्देश्य से परिचालित होते है, जो रचना प्रक्रियाँ को केंद्र होता है परिणामतः कविता के निर्माण क्षण मे चुने गये शब्द एंव वाक्य अपनी चेतन प्रक्रिया से गुज़र कर एक निश्चित अर्थ एवं सन्दर्भ रखते हैं एक निश्चित वाक्य क्रम एवं विन्यास रखते हैं\इस तरह एक तरफ़

तो शिल्प कलाकार के लिये अपनी अभिव्यक्ति के संप्रेषण की दृष्टि से महत्त्व रखता है तो दूसरी तरफ पाठक आलोचक के लिये रचना से साक्षात्कार की दृष्टि से"। [२] शब्द या पद वाक्य शायर के लिये अभिव्यक्ति का मार्ग है तो पाठक आलोचक के लिये यही मार्ग रचना प्रक्रिया को जान पाने का साधन है। यानि "दोनों की यात्रा विपरीत दिशा मे होती है।"[३] किसी भी कृति का स्वरूप कृतिकार की जीवन दृष्टि का पता देता है। रीतिकालीन दरबारी कवि राज्याश्रित थे इसलिये उनकी कविता राजाओं को ख़ुश करने के लिये लिखी गई। श्रृंगार रस की, अलंकारों की, नायिका के नख-शिख वर्णन की भरमार इस की पुष्टि करती है। भक्ति कविता में ऐसा कोई आग्रह नहीं दीखता क्योंकि वह कविता जिसके लिए लिखी गई है (ईश्वर की आराधना) उस की तरफ़ से रस-छंद अलंकारों का कोई पारितोषिक नही मिलने वाला है, इस लिये उस कविता मे भावों का सहज प्रवाह है। कलापक्ष सप्रयास नहीं अनजाने में सुन्दर बना है। इसी प्रकार साठेात्तरी कविताओं में छंद-भंग, विरोध के स्वर, नवीन उपमान, अलंकारों की अवज्ञा इत्यादि कवियों की विद्रोही चेतना के परिचायक हैं। किंतु जब हम अदम गोण्डवी की रचनाओं में कथ्य और शिल्प के अंतस्संबध को देखते हैं तो लगता है कि अभिव्यक्ति के लिये इन्होंने ठीक माध्यम नही चुना है। मुक्त और नई चेतना के शायर द्वारा माध्यम के रूप में ग़ज़ल जैसी अनुशासित-लीकबद्ध विधा को अपनाना कुछ अजीब-सा लगता है। वैसे भी ग़ज़ल की मूल प्रकृति गीतिपरक और रूमानी है, जबकि गोण्डवी की विचारधारा में हमें कहीं भी रूमानियत या कल्पना के दर्शन नहीं होते। उनकी ग़ज़लों मे भूख है, अभाव है, वर्ग भेद है, वर्तमान समय और समाज की ज्वलंत समस्याऐं हैं यानि उनकी ग़ज़ल की दुनिया हक़ीक़त की दुनिया है जो कि निहायत ग़ैर रूमानी है। तब उन्होंने इतने रूमानी फॉर्म

को क्यों अपनाया ?

यहां प्रसंगवश मुक्तिबोध का उदाहरण देना समीचीन रहेगा। मुक्तिबोध ने काव्यशिल्प के रूप में फैण्टेसी को चुना था जबकि वह स्वप्न-जीवियों रोमांसवादियों की कल्पना-विधा कहलाती है। फैन्टेसी का कोशगत अर्थ भी 'कल्पना' 'स्वैर कल्पना, स्वप्न चित्र, भ्रांति'(४) आदि है। लेकिन मुक्तिबोध की कविता मे हम फैंटेसी का स्वरूप बिल्कुल बदला हुआ पाते हैं। यहां फैंटेसी स्वप्नों की बेतरतीब बिंबावलि का नही क्रूर सत्य की वाहक कविता का अर्थ देती है। इससे हमे उनकी रचनात्मक शक्ति का पता चलता है। वे मनचाहा माध्यम अपनाते हैं और उसमें अपना अभिप्राय भर देते हैं। और यह संगति बिल्कुल भी बेतुकी नही लगती ।

अतः उर्दू फ़ारसी की ग़ज़लों को पढ़-सुन कर ग़ज़ल के प्रति जो आमधारणा बन गई थी कि ग़ज़ल में सिर्फ आशिक़-माशूक़ा का हास्य-रूदन ही होता है। हिंदी ग़ज़लकारों ने इस बनी बनाई भ्रांत धारणा को तोड़ा और ग़ज़लों मे नई उर्जा भर दी। गोण्डवी की ग़ज़लों में हम वस्तु और रूप दोनों में पूर्ण सामंजस्य पाते हैं। रूप के स्तर पर बाहरी ढांचों - शेर, रदीफ़ काफ़िया, बहर यानि शिल्पगत तकनीकी अनिवार्यताएं पूर्ण है तो वस्तु के स्तर पर अनतं लोक संवेदना।

इनकी ग़ज़लो के कलापक्ष का अध्ययन करने पर हम पाएंगे कि अभिव्यक्ति के लिये इन्होंने जो माध्यम तलाश किया शिल्प के स्तर पर भी उसके साथ पूरी तरह इंसाफ़ किया है। कथ्य और कथन के बीच विरोध पूर्ण एकता विद्यमान है।

भाषा - रामस्वरूप चतुर्वेदी ने 'भाषा और संवेदना' नामक अपनी पुस्तक में आज के सन्दर्भ में भाषा को रचना की उत्कृष्टता की सबसे विश्वसनीय कसौटी बताया है। क्योंकि ' आज की कविता को जांचने के लिये जो अब

सचमुच प्रास के रजत पाश से मुक्त हो चुकी है, अलंकारों की उपयोगिता अस्वीकार कर चुकी है और छंदों की पायले उतार चुकी है। काव्य भाषा का प्रतिमान ही शेष रहा गया है.' कुछ हद तक ग़ज़ल में भी भाषा का प्रतिमान महत्वपूर्ण है क्योंकि भाषा कवि की बल्कि सभी की वर्गीय चेतना का पता देती है। आज के युग में काव्य-भाषा जैसी विशिष्ट चीज़ की मान्यता अस्वीकार हो गई है। यह माना जाने लगा है कि सुसंस्कृत भाषा, परिवर्धित भाषा, आभिजात्य भाषा, अलंकृत भाषा, सुरूचिपूर्ण भाषा जैसे विशेषण कविता को जनसाधारण से दूर करते है एक वर्ग विशेष तक ही सीमित रखते है। अगर कविता जनसाधारण के लिये लिखी जा रही है तो वह अलंकृत, परिष्टकृत या विशिष्ट क्यों हो ? जनसाधारण की भाषा में ही क्यों न लिखी जाऐ। इस सोच का पूरा निर्वाह अदम गोण्डवी की ग़ज़लों की भाषा में हमें दिखता है अगर अभिजात शब्दावली में अभिजात्यवादियो के विरोध मे ग़ज़ल लिखी जाऐ तो असंगत प्रयोग होगा। जैसे गोण्डवी के एक शेर से उदाहरण दे सकते है। महज तनख़्वाह से निबटेंगे क्या रखरे लुगाई के/हज़ारों रास्ते है सिन्हा साहब की कमाई के। इसमे 'लुगाई' ग्रामीण बल्कि कहना चाहिये कि 'गंवारू' शब्द है. लेकिन इसकी जगह यदि 'शरीके-हयात' या जीवन-साथी या धर्मपत्नी जैसे सम्मान सूचक शब्द रखे जाते तो वह विरोधात्मक प्रखरता नही आती जो लुगाई कहने से आई है। निसंदेह यह शब्द ग़ज़ल की अदा के विरूद्ध है सौन्दर्य वादियो और अभिजात्यवादियो के मुंह का ज़ायक़ा ख़राब करता है. लेकिन कहने वाले की चिढ़ को, उसकी वर्गीय स्थिति को अभिव्यक्ति प्रदान करने मे पूरी तरह सक्षम है। लोक शब्दों का प्रयोग अदम गोण्डवी की ग़ज़लों मे अन्य स्थानो पर भी हुआ है। जैसे छोकरी, गँवारू, किसान इत्यादि। तद्भव-तत्सम-देशज शब्दों के अलावा अंग्रेज़ी, उर्दू, फ़ारसी, अरबी के

शब्दो का मणिकांचन संयोग इनकी ग़ज़लों मे मिलता है इसका कारण यह है कि अपने कथ्य को धार देने के लिये शायर सभी तरह के शब्दों का प्रयोग बिना झिझक के करता है। यद्यपि ये कई तरह के शब्द है लेकिन इतने प्रचलित शब्द है कि इनका अर्थ जानने के लिये शब्दकोश उठाने की जरूरत नही पड़ती अदर्म गोण्डवी बोलचाल की भाषा इस्तेमाल करते है। इनकी जो भाषा है वही भाषा हमारी भी है, पर कवि उसी भाषा को अपने दम से अर्थवान् बनाता है। भवानी प्रसाद मिश्र ने कहा है। जिस तरह हम बोलते है उस तरह तू लिख/और उसके बाद भी हमसे बड़ा तू दिख। गोण्डवी की ग़ज़लों मे यही विशेषता है, गहरे जीवनानुभव . सामान्यीकृत होकर अत्यंत सहज हो उठे है।

तत्सम शब्द - यद्यपि ग़ज़ल के लिये तत्सम शब्दावली उपयुक्त नही मानी जाती लेकिन अगर उससे प्रवाह खण्डित नहीं हो तो ग़लत भी नही होगी। जैसे आचरण, चेतना, मित्रों, क्षितिज, सभ्यता, संयम, सन्दर्भ, पशु ,विसर्जन, नग्नता, मानव, दर्पण, सत्य, साक्षी चित्र- बिंबित, संत्रास, विशेषज्ञ, नीर इत्यादि।

उदा.-

यूं तो संयम के मुखौटे में भी सब लगते हैं सभ्य
भीड़ के सन्दर्भ मे देखों तो आदम खोर से
शब्द-दर्पण में समय का चित्र बिंबित हो उठा
सत्य को गरिमा मिली कवि कल्पना की कोर से

तद्भव शब्द - हमारी भाषा का एक बड़ा प्रतिशत तद्भव शब्दावली से बनता है। गोण्डवी की शायरी में तद्भव शब्दों का प्रयोग प्रचुरता से हुआ

है। दरअसल हमारी भाषा ही तद्भव शब्दो से बनी है। ये शब्द हमारी बोल-चाल की भाषा के अभिन्न अंग हैं। जैसे गांव, धरती, मुखिया, पत्थर, सच, चाँद, सूरज, भिखारी, भट्ठी, भाप, कुत्ता, किसान, बिवाई, घर, इत्यादि।

उदा० :-

सांप लिपटे हैं बबूलों की कंटीली शाख से
सिरफिरों को ज़िंदगी में किस क़दर विश्वास है

तद्भव शब्दों का प्रयोग गोण्डवी की ग़ज़लों में कम, नज़्मों और कत्आत में ज़्यादा मिलता है। देशज शब्द भी इनकी शायरी में मिल जाते है जैसे- माटी, कांधा, छप्पर, पोखर, चौपाल, लुगाई, खूंटा इत्यादि।

उर्दू शब्द - अदम गोण्डवी की ग़ज़लों की भाषा का एक बड़ा हिस्सा उर्दू से बना है। इसमें अरबी-फ़ारसी-तुर्की शब्द भी शामिल है। कुछ ग़ज़लें तो ऐसी भी हैं कि पढ़ने के बाद यह प्रश्न मन मे उभरता है कि ये ग़ज़ल हिंदी में लिखी गई है कि उर्दू में ? उर्दू की कठिन शब्दावली भी ली गई है और कहीं-कहीं तो हिन्दी-उर्दू को ज़बरदस्ती मिलाया गया है जैसे -

दिल को तड़पाती है असफल प्यार की तीखी चुभन
शबनमी ओठों पे गोया दास्ताने-हीर है।

हिंदी, अंग्रेज़ी, उर्दू की मिलीजुली खिचड़ी—

क़ैद कर लो अपने ड्रांइंगरूम में मधुमास को
कितनी वह शतनाक है सरजू की पाकीज़ा कछार
मीटरों लहरें उछलती हश्र का आभास है।

गोण्डवी जी ने उर्दू का प्रयोग बहुत किया है कहीं - कहीं तो यह प्रयोग हद से ज़्यादा है।

---- पैग़ामे सुब्हे-फ़र्दा के मुंतज़िर है जो भी
हालाते-हाज़िरा में मंसूर बन के आऐ।

---- बम उगाएंगे अदम दहकान गंदुम के एवज़
आप पहुँचा दे हुकूमत तक हमारा ये पयाम

---- सरमाये से आसूदगी हासिल हुई जिसे
उस शख़्स को जनाब मेरे रूबरू करें।

उर्दू शब्दों का प्रयोग ज़्यादातर हिंदी ग़ज़लकार करते हैं, चाहे वे शमशेर हो या दुष्यंत कुमार क्योंकि ये ग़ज़लकार सहज अभिव्यक्ति के पक्षधर है हिंदी - उर्दू के पचड़े में पड़ने वाले नही। शमशेर एवं दुष्यंत के भी कई शेर पूर्णतः उर्दू के हैं

महबूब है कायनात कुल, महबूब है उसकी ज़ात कुल
कौन किसे ख़बर करे किसका निज़ाम हो चुका (५)
लिखा है मुक़द्दर मे दर-दर की दुआ मांगो
सय्यार-ओ-मह-ओ-महर-ओ-अख़्तर की दुआ मांगो

शमशेर (६)

दुष्यंत की ग़ज़ल में-

इस क़दर पाबंदी-ए-मज़हब कि सदक़े आप के
जब से आज़ादी मिली है मुल्क में रमज़ान है

हिंदी वालों द्वारा उर्दू का यह अंधाधुंध प्रयोग ही उर्दू वालों को यह कहने का मौका देता है कि हिंदी ग़ज़ल उर्दू के सहारे चल रही है। हिंदी ग़ज़ल से यह तात्पर्य नहीं कि उसमे शुद्ध हिन्दी हो लेकिन उर्दू की अप्रचलित शब्दावली भी न हो। दुष्यंत ने अपनी ग़ज़लों मे उर्दू के प्रयोग के बारे में

कैफ़ियत दी है कि "उर्दू और हिंदी अपने -अपने सिंहासन से उतर कर जब आम आदमी के पास आती है तो उनमे फ़र्क कर पाना बड़ा मुश्किल होता है।मेरी नीयत और कोशिश यह रही है कि इन दोंनो भाषाओं को ज़्यादा से ज़्यादा करीब ला सकूं। इसलिये ये ग़ज़लें उस भाषा में कही गयी है जिसे मैं बोलता हूँ"।[७] निस्संदेह हम सभी जो भाषा बोलते हैं उसमे हिंदी-उर्दू मिली होती है क्योंकि हिंदी उर्दू में शब्दों का फ़र्क है, शैली का नही। फ़िराक़ ने तो उर्दू को हिंदी की एक विशेष शैली ही कहा है "वस्तुतः खड़ी बोली हिंदी को एक विशेष ढंग से या एक विशेष शैली मे प्रयोग करना उर्दू है" [८] इसलिये हिन्दी वाले उर्दू के प्रयोग से तो बिल्कुल नही बच सकते, बचना भी नही है क्योंकि इससें भाषा की स्वाभाविकता नष्ट होगी, लेकिन दो बातों का ध्यान रखना होगा; एक तो यह कि उर्दू शब्दों का बेसुरा प्रयोग न हो, दूसरा यह कि किलष्ट उर्दू से बचे। उर्दू शब्दो का खुला प्रयोग विशाल हृदयता का परिचय देता है। उर्दू को लेकर कोई दुराग्रह अदम गोण्डवी के मन में नही दीखता ।

अंग्रेज़ी के शब्द - अंग्रेज़ी शब्दों के प्रयोग के बारे में भी यही बात कही जा सकती है कि जो आम बोली में है वह कविता में क्यों न आए? गोण्डवी की ग़ज़लों मे अंग्रेज़ी के बहुत शब्द नहीं आते हैं और जो आते हैं वो बिल्कुल पता भी नहीं चलता कि ये शब्द विदेशी हैं जैसे ड्राइंगरूम, शोकेस, स्कॉच, प्लेट, व्हिस्की, लॉन, टी. वी. रेकार्ड, सिंबल इत्यादि।

खेत जो सीलिंग के थे सब चक में शामिल हो गए
—ये नयी पीढ़ी पे मबनी है वही जज्मेंट दे
फ़ल्सफ़ा गांधी का मौजूं है कि नक्सलवाद है

ये अंग्रेज़ी के शब्द खलते नही है।

डॉ. हरदयाल की यह टिप्पणी गोण्डवी की ग़ज़लों पर सटीक बैठती है कि

''भाषा की वे सब अदाएं युवा लेखकों ने त्याग दी है जो सामंती मनोवृत्ति की उपज है।''* अदम गोण्डवी की भाषा में सबसे बड़ी बात है अंदाज़। इनकी ग़ज़लों में आम आदमी का स्वर है उसी के शब्द है और उसी का अंदाज़ है।

— मुझको नज़्मों-ज़ब्त की तालीम देना बाद में
पहले अपनी रहबरी को आचरन तक ले चलो
— मुल्क जाऐ भाड़ मे इससे उन्हें मतलब नही
एक ही ख़्वाहिश है कि कुनबें मे मुख़्तारी रहे।

कही - कही इनकी शब्दावली शुद्धतावादियों को परेशान भी करती है जैसे

— काजू भुने पलेट मे व्हिस्की गिलास में
— इस अहद में प्यार का सिंबल तिकोना हो गया

ग़ज़ल के परम्परागत ढर्रे पर तो यह शब्दावली निश्चय ही आपत्तिजनक है, किंतु अगर शुद्धतावादियों को खुश ही करते रहे तो ग़ज़ल में नयेपन की गुंजाइश ही खत्म हो जाएगी।

कुछ अश्लील शब्दो का प्रयोग भी गोण्डवी की ग़ज़लो की एक कमी या ज़्यादती माना जाता है जैसे।

— सभ्यता रजनीश के हम्माम में है बेनक़ाब
— ब्रेसरी के हुक पे ठहरी चेतना रजनीश की
— जितने हरामख़ोर थे कुर्बो जवार में
परधान बनके आ गये अगली कतार में

यहां शायर इन शब्दों का प्रयोग चौंकाने के लिये नही करता है बल्कि यह प्रयोग कथ्य को ज़्यादा पुष्ट और संप्रेष्य बनाता है क्योंकि अश्लीलता शब्दो में नही अर्थ में या यों कहिये कि नीयत में होती है । गालियों या अश्लील शब्दों का प्रयोग आधुनिक साहित्य मे सहजता से हो रहा है

* हिंदी कविता का समकालीन परिदृश्य पृ. 80

क्योंकि समाज मे भी यह प्रयोग सहजता से होरहा है फिर साहित्य इनके प्रयोग से क्यों मुँह छुपाऐ। हमारे देश में औरत के लिये देवी, स्त्री, जैसे शब्द है तो लुगाई जैसे भी। औरत को देवी कह देना अलग बता है और सचमुच देवी मानना बिल्कुल अलग। शायर अपनी भाषा से एक तल्ख़ हक़ीक़त को बयां कर रहा है। हक़ीक़त तल्ख़ हो तो ज़ुबान पर थोड़ी तुर्शी आ जाना स्वाभाविक है —

— औरत तुम्हारे पांव की जूती की तरह है
जब बोरियत महसूस हो घर से निकाल दो
— रोटी कितनी महंगी है ये वो औरत बताएगी
जिसने जिस्म गिरवी रखके ये क़ीमत चुकाई है।
— रोशनी की लाश से अब तक जिना करते रहे
ये वहम पाले हुऐ शम्सो-क़मर है जिंदगी।

गालियों जैसे 'हरामखोर' जैसे शब्द भी इसी तरह समाज से निकले हुए शब्द है। यहां प्रधान को सीधे-सीधे हराम की कमाई खाने वाला बताया जा रहा है दूसरी तरह से प्रधान होने के लिये न्यूनतम योग्यता 'हराम खोरी' है। यह बताया गया है, अतः तल्ख़ हक़ीक़त को बयां करने के लिये रसयुक्त शब्द नही इस्तेमाल किये जा सकते । वैसे भी नयी चेतना से जुड़ा कवि अगर किसी रस मे विश्वास करता है तो वह 'जीवन रस' है और कुछ नही। यह रस मीठा कम और कड़वा ज़्यादा है। शायर इसे भद्रता की, अभिजात्यता की चाशनी मिला कर मीठा बनाने की कोशिश नही करता यही अदम गोण्डवी की भाषा की प्रमुख विशेषता है।

— उपमान - प्राचीन रूढ़ उपमान आज की नवीन परिस्थितियों मे भावनाओं को पूर्ण एंवं सही रूप में अभिव्यक्त नही कर पाते क्योंकि ''ये उपमान मैले हो गये हैं, देवता इन प्रतीकों के कर गये है कूच कभी बासन अधि

एक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है''।[६] अतः पुराने उपमान प्रयोग की अधिकता के कारण घिस-घिस कर बदरंग हो चुके हैं। विज्ञान के प्रभाव के कारण भी कुछ पुराने उपमान अपनी चमक खो चुके है जैसे चाँद।

आर्मस्ट्रांग तो कहता है चाँद पत्थर है
दौरे-हाज़िर में किसे हुस्न का मेआर कहे ?

शायर उपमानों की कमी की ओर संकेत करता है क्योंकि उसकी बाग़ी जनवादी चेतना सामंतशाही उपमान नही अपना सकती । इसलिये वह अपने लिये नये उपमान गढ़ता है जैसे- भुखमरी सी धूप, बग़ावत के गुलाब, महंगाई की भट्ठी या भिखारी की क़बा सी आज़ादी

नंगी पीठ हो जाती है जब हम पेट ढंकते हैं
मेरे हिस्से की आज़ादी भिखारी की क़बा सी है

यहां आज़ादी की अपूर्णता की तुलना भिखारी के फटे हुऐ चोग़े से की गई है। ऐसी ही कुछ तुलना फ़ैज़ ने भी की है।

ज़िंदगी क्या किसी मुफ़लिस की क़बा है
जिसमे हर घड़ी दर्द के पैबंद लगे जाते हैं।

शायर सरकार की ग़रीबों को ज़मीन के पट्टे बांटने की नीति को मियादी बुखार मे रोटी के समान घातक बाता है यानि 'स्वीट पॉइज़न' बताता है

बंजर ज़मीन पट्टे में जो दे रहे हैं आप
ये रोटी का टुकड़ा है मियादी बुखार में

भाषा को गोण्डवी फूलों सी नाज़ुक बताते है तो सख़्ती में चट्टान सी कठोर। उसकी धार को जुलाहे के करघे के कतान के समान तनी हुई कहा है तो लेनदार पठान के समान रौबीली अपना हक़ वसूलती हुई।

फूलों सी नाजुकी है तो सख़्ती चट्टान सी
जुलहे के यहां भाषा तनी है कमान सी
सहमे हुऐ हैं इससे अदब के इजारेदार
ये अपना हक़ वसूल रही है पठान सी।

यहां पठान सी से तुरंत एक क्रूर पठान का बिंब आंखों के सामने उभरता है जो यशपाल की 'परदा' कहानी के पठान से काफ़ी कुछ मिलता जुलता है। इसी ग़ज़ल मे शायर ने आगे गाली की तुलना गवांरू किसान से की है। अपने एक मुक्तक मे गोण्डवी जी ने बड़ी सुन्दर उपमान योजना प्रस्तुत की है।

फूल के जिस्म पे पहलू बदल रही तितली
पेट की आग में चलते हुए बशर की तरह
मेरे ज़ेहन में तेरी शक्ल धुंधली-धुधली है।
हसीन कोहरे में डूबे हुऐ शज़र की तरह

व्यक्ति वाचक संज्ञाओं, नामों का प्रयोग - अदम गोण्डवी ने अपनी ग़ज़लों में व्यक्तिवाचक संज्ञाओ का भी प्रयोग किया है। कहीं-कहीं यह प्रयोग प्रतीक बन करउभरा है तो कहीं-कहीं अपने अभिधेय अर्थ में किसी व्यक्ति विशेष पर ग़ज़ल लिखी गई है। इनमें अपने समकालीन कवियों अदीबों के नाम प्रमुख है।

होरी, धनिया, घीसू, बुधुआ, रमसुधी शायर द्वारा निर्मित प्रतिनिधि किरदार है जो आम आदमी के प्रतीक है होरी, धनिया, गोबर तो प्रेमचंद के गोदान के सर्वपरिचित पात्र है। अदम के यहां के अन्य पात्र यद्यपि ऐसा कोई साहित्यिक पूर्व परिचय नही रखते किंतु ये पात्र भी सबके जाने पहचाने है, अजनबी नही। जैसे —

तुम्हारी मेज़ चाँदी की तुम्हारे जाम सोने के
यहाँ जुम्मन के घर में आज भी फूटी रकाबी है।
ग़ल्तियां बाबर की थी जुम्मन का घर फिर क्यूँ जले

(यहाँ भी जुम्मन से प्रेमचंद की पंच परमेश्वर का जुम्मन याद आता है। यह साम्य सिर्फ़ नाम का है।)

या

बूढ़ा बरगद साक्षी है, किस तरह से खो गई
रमसुधी की झोपड़ी सरपंच की चौपाल में

कही-कही ग़ज़लकार ने पौराणिक नामों का प्रयोग किया है

फिर अहिल्या का सरापा जिस्म पत्थर हो गया।

या

पैग़ामे-सुब्हे फ़र्दा के मुंतज़िर हैं जो भी
हालाते-हाज़िरा में मंसूर बन के आऐं।

कही-कही शायर आनी बात की पुष्टि के लिये विज्ञान से प्रमाण भी देता है

बकौल डार्विन बुजदिल ही मारे जाएंगे। (१०)

(Survival of the fittest अर्थात् योग्यतम की उत्तरजीविता का सिद्धांत) या आर्मस्ट्रांग तो कहता है चाँद पत्थर है।(११)

गांधी, रजनीश के नाम भी इनकी ग़ज़लों मे एकाधिक बार मिलते है। शोषक वर्ग के प्रतीक के रूप में सिन्हा साहब, मिसेज सिन्हा, मुखिया, परधान इत्यादि मौजूद हैं

हज़ारो रास्ते हैं सिन्हा साहब की कमाई के
मिसेज सिन्हा के हाथों में जो बेमौसम खनकते हैं
पिछली बाढ़ के तोहफे है ये कंगन कलाई के(१२)

हीर-राझां युसूफ-जुलेखां, लैला-मजनूं का भी अपने प्रतीकात्मक रूप में उल्लेख इन्होंने किया है साथ ही अपने समकालीन साहित्यकारों मसलन सरदार जाफ़री, बेकल उत्साही का भी ये ज़िक्र ससम्मान करते हैं। मंटो को इन्होंने अपनी एक ग़ज़ल नज़र की है। अमृता प्रीतम की प्रशंसा में एक पूरी ग़ज़ल ही लिखी है (ग़ज़ल सं ३६) जो कि अपने आप में अभिनव प्रयोग है।

हिटलर हलाकू, ज़ार, चंगेज़ खाँ, बाबर जैसे बाह्य आक्रमणकारियों के नाम भी इनकी ग़ज़ल में मिलते हैं।

शैली - शैली ही वह प्रमुख तत्व है जिसके कारण समान विचारों और समान स्मृति का उपयोग करने पर भी अलग - अलग व्यक्तियों की रचनाएं अलग- अलग होती हैं इसी के कारण कल्पनाशक्ति अलग दिशा में काम करती है जिससे रचना में निजी विशिष्टता आती है। ग़ालिब ने इसे ही 'अंदाज़े बयां और' कहा है ।

हैं और भी दुनिया मे सुख़नवर बहुत अच्छे
कहते हैं कि ग़ालिब का है अंदाज़े बयाँ और

अन्य सुख़नवर भी अच्छे हैं लेकिन शैली की विशिष्टता ग़ालिब को उनसे भिन्न करती है।

यह और अंदाज़े बयाँ ही कुछ हम अदम गोण्डवी की शैली में भी पाते है। इनका एक विशिष्ट तेवर है। विद्रोहात्मक शैली इन्होंने अपनाई है, चूंकि ये ग़ज़लें विशिष्ट व्यक्ति की नहीं, व्यक्ति की विशिष्टता की ग़ज़लें है इसलिये इनमें समाज के प्रति फ़िक्र और अपने प्रति बेफ़िकी का भाव मिलता है। ये यथार्थपरक ग़ज़लें है और यथार्थ हर जगह छिपा हुआ रहता है कहीं स्वप्न के पर्दे के पीछे तो कहीं छल के पर्दे के पीछे या झूठ

के पर्दे के पीछे, ग़ज़लकार इस पर्दे को खींच देने के लिये प्रतिबद्ध दिखाई देता है।

अगर इसमें से दीगर नस्ल का हिस्सा जुदा कर दें
तो हिंदुस्तान की तहज़ीब बेपर्दा नज़र आए। (१३)

हर तहज़ीब पर्दे के कारण (असलियत पर पड़ा हुआ पर्दा) ही तहज़ीब है, अगर पर्दा न हो तो आम जनजीवन और सुसंस्कृत जीवन में विभेद ही न हो। अदम गोण्डवी इसी विभेद का विरोध करते हैं। इस विरोध के कारण ही इनकी शैली मे विनम्रता नही विद्रोह झलकता है। ये बग़ावत की सलाह देते है। गांधीवाद से असहमति जताते हैं।

जनता के पास एक ही चारा है बग़ावत
ये बात कह रहा हूँ मैं होशो-हवास में (१४)

लगी है होड़ सी देखो अमीरी और ग़रीबी मे
ये गांधीवाद के ढांचे की बुनियादी ख़राबी है। (१५)

विद्रोहात्मक शैली कहीं-कहीं गुस्से में निकली हुई भड़ास प्रतीत होती है।

चीनी नही है घर मे, लो मेहमान आ गये।
महंगाई की भट्ठी पे, शराफत उबाल दो।(१६)

इन्होंने मशवरा शैली भी खूब अपनाई है।

हिंदू या मुस्लिम के अहसासात को मत छेड़िये
अपनी कुर्सी के लिये जज़्बात को मत छेड़िये।(१७)

नीलोफ़र शबनम नही अंगार की बातें करो
वक़्त के बदले हुऐ मेआर की बातें करो।(१८)

तिश्नगी को वोदका के आचमन तक ले चलो[१९]

या

अदीबों की नयी पीढ़ी से मेरी ये गुज़ारिश है
संजो कर रखे धूमिल की विरासत को क़रीने से [२०]

मशवरों के साथ-साथ गोण्डवी कहीं-कहीं उपदेश भी देने लगते हैं। उपदेशात्मक शैली में एक शेर देखिये

सरमाए से आसूदगी हासिल जिसे हुई
उस शख़्स को जनाब मेरे रूबरू करें।[२१]

संबोधन शैली का प्रयोग भी इनकी ग़ज़लों में मिलता है। दोस्तों, अदीबों शहर के बाशिंदों संबोधनो के साथ ही आप तुम, तुम्हारी, मित्रों आदि संबोधन अनेक बार प्रयुक्त हुए हैं। विशेषज्ञों को मुखातिब एक शेर है—

क्या सच हैं देशमुख के कहने से विशेषज्ञों
मुमताज के ख़्वाबों की ताबीर बदल दोगे।[२२]

कुछ ग़ज़लों में वक्तव्य शैली मिलती है।

बंगले बनेंगे पालतू कुत्तों के वास्ते
हम आप तरसते ही रहेंगे मकान को
जब तक रहेंगे सेठों के चेले जमात में
तब तक खुशी नसीब न होगी किसान को
घर मे गिनेगें आप तो पंजे से कम नही
दफ़्तर मे टांगते हैं तिकोने निशान को [२३]

इनकी शैली मे कहीं - कहीं विशुद्ध नारेबाज़ी के भी दर्शन होते है। जिनमे उदाहरण भी शामिल होते हैं जैसे –

भाप बन सकती नहीं पानी अगर हो नीम गर्म
क्रांति लाने के लिये हथियार की बातें करो। [२४]

वर्णनात्मक शैली में लिखी गई एक मुसलसल ग़ज़ल में बाढ़ का विस्तृत वर्णन देखने को मिलता है

जिस तरफ डालो नज़र सैलाब का संत्रास है
बाढ़ मे डूबे शज़र है, नीलगूँ आकाश है
सामने की झाड़ियों में जो उलझकर रह गई
वह किसी डूबे हुऐ इंसान की इक लाश है
सांप लिपटे हैं बबूलों की कंटीली शाख से
सिरफ़िरों को ज़िंदगी में किस क़दर विश्वास है
कितनी वहशतनाक है सरजू की पाकीज़ा कछार
मीटरों लहरें उछलती हश्र का आभास है (२५)

वर्णनात्मक शैली इनकी एकाधिक मुसलसल ग़ज़लों मे मिलती है। वार्तालाप शैली का भी इन्होंने प्रयोग किया है। ज़्यादातर ग़ज़लें बतकही के अंदाज़ में लिखीं गई हैं जिसमे ग़ज़लकार कहीं समझाता है, कहीं अपनी बात कहता है, कहीं आह्वान करता है, कहीं खेद तो कही विरोध प्रकट करता है। युवावर्ग का आह्वान इन्होंने अनेक बार किया है –

-आओ जदीद फ़न पे कोई गुफ्तगूँ करें(२६)
-आप आएं तो कभी गांव की चौपालों पर। (२७)

या

छेड़िये इक जंग मिलजुल कर ग़रीबी के ख़िलाफ (२८)

प्रश्नात्मक शैली अदम गोण्डवी की ग़ज़लों की विशेष शैली है। गोण्डवी अपनी ग़ज़लों मे शासन से, समाज़ से, जनता से प्रश्न पूछते हैं। ये प्रश्न हम सब से जुड़े होते हैं, इसलिये सोचने पर मजबूर करते हैं।

- सौ में सत्तर आदमी फ़िलहाल जब नाशाद हैं
दिल पे रख के हाथ कहिये देश क्या आज़ाद है?(२९)

- जो उलझ कर रह गई है फाइलों के जाल में
  गांव तक वो रोशनी आएगी कितने साल में ?(३०)
- क्यूँ नहीं उठती है अब कोई नज़र तफ़्तीश की ?(३१)
- क्या किया दिल्ली ने उन ख़ानाबदोशों के लिये ?(३२)

इन प्रश्नों का समाधान, निराकरण वे नयी पीढ़ी पर सौंपते हैं।

ये नई पीढ़ी पे मबनी है वही जज्मेंट दें
फलसफा गांधी का मौजूँ है कि नक्सलवाद है ?(३३)

इस प्रकार गोण्डवी की ग़ज़लों में संबोधन, प्रश्नात्मक, वार्तालाप आदि अनेक शैलियों का प्रयोग मिलता है। यह विभिन्नता कथ्य के अनुरूप आई है। शैलियों की विभिन्नता के कारण ग़ज़लों की प्रभावोंत्पादकता भी बढ़ गई है।

इस प्रकार अदम गोण्डवी की ग़ज़लों के शिल्प या रूपगठन का अध्ययन करने पर हम देखते है कि इन ग़ज़लों का शिल्प कथ्य के अनुरूप है। जनचेतना से जुड़ा हआ ग़ज़लकार शिल्प को अलंकृत बनाने में दिलचस्पी नही लेता । लेकिन शिल्प के नियमों में शिथिलता भी नहीं दिखती है। तकनीकी अनिवार्यताएं भी इन ग़ज़लों में पूरी तरह से है। शिल्प को सजाने सवाँरने का जबरन कोई प्रयास इन में नही दीखता।

कलावादी, रूपवादी रचनाकार शिल्प को प्रधान और कथ्य को गौण मानते है, किंतु वस्तुवादी रचनाकर शिल्प की सादगी पर ज़ोर देते हैं। क्योंकि जन-साधारण की कविता दुर्बोध शिल्प में होगी तो वह सिर्फ़ वैयक्तिक वाणी विलास बन कर रह जाएगी। अदम गोण्डवी की ग़ज़लों मे कथ्य प्रभावशाली है उसी के अनुरूप शिल्प का सहजता से निर्वाह भी हुआ है।

संदर्भ

1. क्रोचे - सौन्दर्य-शास्त्र पृ.-235.
2. अशोक चक्रधर - मुक्तिबोध की काव्य-प्रक्रिया पृ.-82-83
3. मुक्ति बोध - नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र पृ.-86.
4. हिंदी-अंग्रेजी शब्द कोश - फादर कामिल बुल्के
5. उदिता पृ.-98.
6. वही, पृ.-94
7. दुष्यंत कुमार - साये में धूप, भूमिका
8. फ़िराक़ - उर्दू भाषा और साहित्य पृ.-14
9. अज्ञेय - सर्जना के क्षण पृ.-55
10. अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर ग़ज़ल 47
11. वही, ग़ज़ल सं.-18
12. वही, ग़ज़ल सं.-28
13. वही, " 25
14. वही, " 26
15. वही, " 14
16. वही, " 11
17. वही, " 45
18. वही, " 12
19. वही, " 2
20. वही, " 23
21. वही, " 32
22. वही, " 46
23. वही, " 17
24. वही, " 12
25. वही, " 38

26•	अदम गोण्डवी - धरती की सतह पर,	ग़ज़ल सं•-	32
27•	वही,	"	47
28•	वही,	"	3
29•	वही,	"	5
30•	वही,	"	5
31•	वही,	"	31
32•	वही,	"	43
33•	वही,	"	3
34•	वही,	"	

उपसंहार

ग़ज़ल एक संवेदनशील रचना होती है। इसकी 'बनावट' और 'बुनावट' दोनों बहुत संवेदनशील होते हैं। बाहरी तौर पर रूप के स्तर पर इसकी बनावट छेड़छाड़ की गुंजाइश नही रखती यानि रदीफ़ काफ़िया बह्र सब का परिपालन अनिवार्यता के साथ होना चाहिये। इसी तरह बाहरी बनावट के साथ ही इसकी भीतरी बुनावट भी संवेदनशील होती है। ग़ज़ल का मूल अंग ही जज़्बा है। ग़ज़ल में बड़े से बड़ा दर्शन भी भावना में बंध कर आता है, सीधे हृदय को छूता है। चिंतन, मनन या मस्तिष्क का कार्य बाद में शुरू होता है। जिगर ने कहा है—

हम से पूछो ग़ज़ल क्या है ग़ज़ल का फ़न क्या है।
चंद लफ़्जों में कोई आग समो दी जाएं।

यह चंद लफ़्जों मे समोई हुई आग बड़े-बड़े सिद्धांतों, ग्रंथों का दो मिसरों में सारांश प्रस्तुत करने की कला है।

संक्षिप्तता, घनत्व, सौन्दर्य, संवेदनशीलता और संगीतात्मकता ये ग़ज़ल की ५ मूल शर्तें मानी जाती थी। वर्तमान ग़ज़लकारों ने इन में से 'संगीतात्मकता' की जगह 'संचेतना' को ले लिया। यानि ग़ज़ल मे विचार प्रधानता आ गई। अपने तृतीय अध्याय (ग़ज़ल का आधुनिक संदर्भ) में हमने ग़ज़ल के इस नये तत्व पर विचार किया है। ग़ज़ल की उत्पत्ति अरब के क़सीदे से हुई थी। वहां से ग़ज़ल फ़ारसी उर्दू के रास्ते हिंदी तक पहुँची है। अपने आरंभ से अब तक की ग़ज़ल में यह अंतर आया है कि पहले जो ग़ज़ल वर्ग-विशेष की सम्पत्ति थी वह

अब सामूहिक अमानत बन गई है।

जामो-मीना की खनक से थी ये वाबस्ता ज़रूर
देखिये, अब ज़िंदगी की तर्जुमानी है ग़ज़ल

(अदम गोण्डवी ग़ज़ल सं० २२)

यह जिंदगी का तर्जुमा ही ग़ज़ल का आधुनिक सन्दर्भ है। आधुनिक ग़ज़लकारों ने आम जीवन को ग़ज़ल में जगह दी। इस तरह एक सामंती काव्यविधा को जनजीवन से जोड़ा। हिंदी भाषी ग़ज़लकारों में यह कार्य दुष्यंत कुमार ने शुरू किया था। उनकी ग़ज़लों में व्यवस्था के प्रति, जड़ता के प्रति विद्रोह मिलता है। रोज़मर्रा की जिंदगी से जुड़े सवाल, समस्याऐं उन्होंने ग़ज़ल में उठाऐ। इस तरह उन्होंने हिंदी वालो को ग़ज़ल लेखन के लिये लीक से हट कर एक नयी चेतना से परिचित करवाया। वर्तमान नवीन ग़ज़लकारों की ग़ज़लें उसी प्रेरणा से अनुप्राणित है। मुक़ीम भारती, कुअँर बेचैन, नीरज, अशोक अंजुम, परमानंद अश्रुज, माहेश्वर तिवारी, डॉ. उर्मिलेश, ज़हीर कुरैशी, वर्षा सिंह, हनुमंत नायडू, राजकुमारी रश्मि आदि प्रमुख नवीन ग़ज़लकार हैं। इन सभी की ग़ज़लों में हमें विषयों की सम्पन्नता के साथ-साथ विशिष्ट एवं नयी शैलियों के भी दर्शन होते है। ग़ज़ल के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग हो रहे और इन प्रयोगों के प्रति असंतोष भी व्यक्त होता रहा है। कोई भी साहित्यिक विधा बन-बन कर बिगड़ती है तथा बिगड़-बिगड़ कर बनती है। इस तरह हिंदी ग़ज़ल भी अपना एक भिन्न नया स्वरूप अख़्तियार करती हो रही है। अदम गोण्डवी की ग़ज़लें हिंदी की महत्वपूर्ण ग़ज़लें है। हिंदी ग़ज़ल का 'अथ' और 'इति' दुष्यंत कुमार पर ही माना जाता है गोण्डवी दुष्यंत की ही

परम्परा को आगे बढ़ाते हैं ज्ञान प्रकाश विवेक ने अदम गोण्डवी की क्षमता का सही मूल्यांकन किया है " सामान्यतः ग़ज़लकार यह कहते हुऐ पाऐ गये हैं कि दुष्यंत तो कील गाड़ गये मान लिया कि दुष्यंत ने कील गाड़ दी तो क्या उस कील को उखाड़ कर आगे बढ़ाने की संभावना समाप्त हो चुकी है। बेशक नही यह दुर्भाग्य ही कहा जाऐगा कि हिंदी ग़ज़लकारों में नये प्रयोगों का हौसला नहीं दिखता। सिर्फ़ एक ग़ज़लकार अदम गोण्डवी ने वह साहस जुटाया है (हंस, मई ९७) साहस ही अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का विशिष्ट तत्व है। अपने खास तेवर से वे व्यवस्था पर , राजनीति पर नौकर शाहों पर कहीं व्यंग्य तो कहीं प्रहार करते हैं। निर्भीकता तो उनमे कबीर की सी है वैसी ही प्रखरता भी है। सत्ता से, समाज से अपने समकालीनों से गोण्डवी प्रश्न करते हैं। इनके ये प्रश्न भीतर तक तिलमिला देते हैं, सोचने पर मजबूर करते है। सबसे बड़ी विशिष्टता ये है कि गोण्डवी समाधान भी सुझाते है। ये समाधान कानून सम्मत नहीं क्रांतिकारी समाधान होते हैं।

-- बम उगाएंगे अदम दहकान गंदुम के एवज़

— जनता के पास एक ही चारा है बग़ावत।

गोण्डवी जनता को बग़ावत का सिर्फ़ मशविरा ही नहीं देते, हौसला भी देते हैं।

परिस्थितिवश किये गये अपराध को वे तर्क के आधार पर सही ठहराते हैं यह इनकी विचारधारा की सबसे बड़ी विशेषता है। बुराईयों की समाज आलोचना करता है, लेकिन उन बुराईयों के मूल कारण क्या हैं उन पर नज़र नही डालता। वे बुनियादी समाजार्थिक असंगतियाँ

जैसे वर्ग-भेद जाति-भेद, अस्पृश्यता, वर्ण व्यवस्था के वे दोष जिनके कारण कोई सवर्ण है तो कोई अवर्ण!

उन पर गोण्डवी प्रकाश डालते हैं भूख बेबसी, ग़रीबी के आगे जीवन के उच्चादर्शो की बातें कितनी हास्यास्पद हो जाती है इस बात को भुक्तभोगी ही महसूस कर सकता है। इसी कटु यथार्थ को गोण्डवी अपनी ग़ज़लों मे स्वर देते है। सभी जानते है कि चोरी करना, झूठ बोलना अपराध है लेकिन जहां सवाल भूख का हो तो कोई सिद्धांत काम नही देता है।

चोरी न करे झूट न बोले तो क्या करें
चूल्हे पे क्या उसूल पकाएंगे शाम को ?

असामाजिक कार्य निश्चित रूप से ग़लत है। लेकिन उन कृत्यों के पीछे कारण क्या है, यह भी देखना ज़रूरी है। हम सामाजिक सत्यों से मुहं नही मोड़ सकते। असमानवितरण लूट को जन्म देता है, हम लूट को ग़लत बताते है उसे खत्म करना चाहते हैं, लेकिन क्यों न पहले असमान वितरण को ख़त्म करें। ग़लती तो नींव से ही है। गोण्डवी की ग़ज़लों की विशेषता है कि वे मूल ग़लतियों की ओर इंगित करती हैं।

बेचता यूँ ही नही हैं आदमी ईमान को
भूख ले जाती हैं ऐसे मोड़ पे इंसान को

ग़लती कार्य में नही कारण में है। गोण्डवी अपने तर्क देते हैं कि जब मूलभूत आवश्यकताऐं ही पूरी नही होंगी तब हम किसी से ऊँचे आदर्शों, सिद्धातों की अपेक्षा कैसे कर सकते हैं। अपनी आवश्यकताएं हर व्यक्ति अपने तरीके से पूरी करता है इसमे ग़लत क्या है ?

क्या ग़लत है कल को उसकी चेतना बाग़ी बने
पल रहा है बचपना जो भूख के अंगार पे।

इस प्रकार गोण्डवी की ग़ज़लों में एक प्रखर क्रांतिकारी चेतना हमे मिलती है। एक सामंती परिवार में जन्म लेकर भी ग़ज़लकार ने अपने वर्ग के संस्कारों का विरोध किया है, ढूंढ - ढूंढ कर सामंतवाद की बुराईयों पर आघात किया है। यह ग़ज़लकार की सच्ची जनवादी चेतना का परिचायक है। एक गांव में रह कर ऐसी प्रखर विचार धारा रखना शायर की क्रांतिकारी चेतना का भी परिचायक है।

गोण्डवी पूरी तरह से सामंती वर्ग से विपरीत विचारधारा में सृजन करते हैं। विरोध विद्रोह आक्रोश तथा परिवर्तन की आकांक्षा इनकी ग़ज़लों में स्पष्ट दिखाई देते हैं| इसी के कारण कहीं-कही इनकी ग़ज़लों में शोर या नारेबाज़ी भी आ गई है। इनकी ग़ज़ल बोलती बहुत है, हल्ला ज़्यादा करती है; इसमे मुखरता है मौन नही। आंतरिक या खामोश संवेदना इनमें नहीं मिलती । कहीं-कहीं तो किसी राजनीतिक विचारधारा कें घोषणा-पत्र को रदीफ काफ़ियों मे बांधने की कोशिश भर है। लगता है कि ये कविता जनता की भावनाओं की अभिव्यक्ति करें यह अच्छा है किंतु वह 'पब्लिक कैरियर' नही है। कविता अपने मूल रूप मे वैयक्तिक ही होती है कविता और नारें मे यही वैयक्तिक भावना विभेद करती है। गोण्डवी की ग़ज़लों में एकातं सौन्दर्य के दर्शन नही होते। जैसे दुष्यंत की ग़ज़लों मे कुछ शांत मंद सौन्दर्य युक्त ग़ज़लें भी है।

तुमको निहारता हूँ सुबह से ऋतम्बरा
अब शाम हो रही है मगर मन नही भरा

इस किस्म की कोई 'चाह' हमे गोण्डवी की ग़ज़लों में नही मिलती। प्रेम पर गोण्डवी ने कुछ लिखना गवारा नही किया। जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं पर ये ज़ोर देते हैं तथा प्रेम को विलासिता का अंग समझते हैं। निश्चय ही यह अतिवाद है।

'जिस्म की भूख कहें या हवस का ज्वार कहें' (अदम गोण्डवी, ग़ज़ल सं० १८) गोण्डवी की भाषा सहज है। क्योंकि वे शब्द को 'ब्रह्म' नही शायर का हथियार मानते हैं जिसे वह अपने तरीके से इस्तेमाल करता है। शब्द-चयन के साथ ही ये शब्द-बचत पर भी ज़ोर देते हैं। इसलिये इनकी ग़ज़लों में "अरथ अमित अति आखर थोरे" है। भावनाओं का संप्रेषण सहज है क्योंकि आम जीवन की घटनाऐं आम जीवन के ही किरदार इनकी ग़ज़लों में है। इसलिये भाव संप्रेषण अत्यंत सुगम है। कहीं-कहीं उर्दू के कठिन शब्द अवश्य आ गये हैं किंतु वे प्रवाह को खण्डित नही करते । अपने समग्र प्रभाव और मूल स्वर में ये ग़ज़लें संवेदनात्मक धरातल पर बेचैनी पैदा करती हैं और व्यवस्था के ख़िलाफ आक्रोश व्यक्त करना सिखाती हैं।

इति।

आधार सामग्री

१ धरती की सतह पर (ग़ज़ल संग्रह, अदम गोण्डवी: मुक्ति प्रका सादतपुर गोकुलपुरी दिल्ली ६४)

सन्दर्भ सामग्री

१- उर्दू भाषा और साहित्य फ़िराक गोरखपुरी, उ° प्र° हिंदी संस्थान लखनऊ १६७६

२ उर्दू साहित्य का इतिहास एहतेशाम हुसैन, अंजुमने तरक्की -ए- उर्दू अलीगढ़ १६५६

३ आधुनिक हिंदी कविता में उर्दू के तत्व, डॉ° नरेश, राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली

४	साये में धूप	दुष्यंत कुमार	राधाकृष्ण प्रका° दिल्ली १६६२
५	दीवाने मीर	मीर	राजकमल प्रका° दिल्ली १६८७
६	दीवाने ग़ालिब	ग़ालिब	राजकमल प्रका° दिल्ली १६६६
७	दीवाने इक़बाल	इक़बाल	हिंद पाकेट बुक्स दिल्ली १६६४
८	दीवाने फ़ैज	फ़ैज	डायमण्ड पाकेट बुक्स दिल्ली १६६४
६	साहिर लुधियानवी जीवनी और संकलन	साहिर	राजपाल एण्ड संस दिल्ली
१०	सरदार जाफरी जीवनी और संकलन	सरदार जाफरी	राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली
११	शामियाने कांच के	कुँअर बेचैन	प्रर्गात प्रकाशन ग़ाज़ियाबाद १६८३
१२	सर्जना के क्षण	अज्ञेय	भारतीय साहित्य प्रका° मेरठ १६६५

१३ हिंदी साहित्य का इतिहास: आचार्य रामचंद्र शुक्ल नागरी प्रचारिणी सभा काशी १६७२

१४	नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएं:	नागार्जुन	राजकमल प्रका° दिल्ली १६६३

१५ केदारनाथ सिंह प्रतिनिधि कविताएँ, केदारनाथ सिंह: राजकमल प्रका° दिल्ली १९९६

१६ मुक्तिबोध की काव्य प्रक्रिया: अशोक चक्रधर

पत्र-पत्रिकाएं

१ 'धर्मयुग', नवम्बर १९८०

२ आजकल, मई १९८१

कोश

१ आक्सफोर्ड डिक्शनरी

२ अंग्रेजी हिन्दी कोश (फ़ादर कामिल बुल्के)

अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का आलोचनात्मक अध्ययन

एम° फिल° उपाधि हेतु लघु शोध प्रबंध

शोध निर्देशक शोधार्थी

डॉ° गोबिन्द प्रसाद मीनेश शर्मा

भारतीय भाषा केंद्र

भाषा, साहित्य एवं संस्कृति अध्ययन संस्थान

जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय

नई दिल्ली ११००६७

१९९८

परिशिष्ट

अदम गोण्डवी की ग़ज़लों पर कार्य करते वक़्त बार-बार कुछ कोतूहल - कुछ प्रश्न मेरे मन मे उठ रहे थे। उन के समाधान के लिये मुझे लगा कि ग़ज़लकार से भी संवाद होना जरूरी है। गोण्डवी जी से मेरा पत्र-व्यवहार था। किंतु बीच मे मेरे पत्र उन के गाँव में स्थित कुछ विरोधियों की वज़ह से उन तक नही पहुंच सके।

अंत मे जब मैंने रजिस्टर्ड पत्र उन के पास भेजा तो उन्होंने तुरंत मुझे कूरियर से अपना पत्र तथा मेरे लिये आवश्यक सामग्री भिजवाई। यह पत्र तथा सामग्री अगर मुझे पहले मिल जाती तो निस्संदेह मै उस का अधिक अच्छी तरह उपयोग कर पाती। बहरहाल अब मैं अपने भेजे प्रश्न तथा गोण्डवी जीं की हस्तलिपि मे उनके उत्तर संकलित किये दे रही हूँ। इसके पीछे मेरे मन में यही चाह है कि मेरे शोध प्रबंध मे ग़ज़लों की आलोचना के साथ ग़ज़लकार का पक्ष भी आऐ। साथ ही इनके पत्र सुरक्षित भी रहें।

प्रश्न

१ अपने बारे मे कुछ बताइये।

२ जनवादी चेतना से जुड़कर भी आपने ग़ज़ल जैसी रूमानी विधा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम कैसे चुना ?

३ हिंदी ग़ज़ल उर्दू ग़ज़ल की तुलना मे कम लोकप्रिय क्यो है ?

४ आपने 'प्रेम' पर एक भी ग़ज़ल नहीं लिखी है ! क्यों ?

५ क्या कारण है कि आपको साहित्य जगत् में वह सम्मान नही मिल पा रहा है जिसके कि आप हक़दार हैं।

— मैं उत्तर प्रदेश के सर्वाधिक पिछड़े जनपद गोंडा के ग्राम आटा में रहकर कृषि कार्य करता हूँ। परिवार में मेरे सिवा पिता और एक भाई के अतिरिक्त पत्नी और एक लड़का है।

— सच यह है कि इस विधा को मैंने सचेतन रूप में नहीं चुना। गोंडा जनपद का माहौल ही कुछ इस तरह का था कि जाने अनजाने मैं भी उसी तरफ मुड़ गया। गोंडा के जनाब असग़र गोंडवी, ज़िगर मुरादाबादी, कृष्ण चन्द्र हैरत, अली सरदा जाफरी, बेकल उत्साही, जैसे ख्यात लब्ध कवियों की जन्म भूमि रहा है फिर तुम स्वयं सोच सकती हो कि कोई साहित्यिक संस्कार सम्पन्न व्यक्ति इनके मोहपाश से कैसे बच सकता है। हो सकता है कि परोक्ष रूप में इन कवियों का प्रभाव विधा के चुनाव में सक्रिय रहा हो। ग़ज़ल विशुद्ध रूप से रूमानी विधा है यह सत्य है लेकिन इसके अपवाद भी तो हैं नहीं तो सैकड़ों साल पहले मीर साहिब जैसे महान कवि ने दिल्ली की तबाही पर ये मिसरा न लिखा होता—

जो दिल का हाल है वही दिल्ली का हाल है

शायद तुम्हें ये बात अटपटी लगे मैंने मीर साहिब के मिसरे में गिरह लगा दी है कि लुटने के लिये दोनों को बुनियाद पड़ी थी

जो दिल का हाल है वही दिल्ली का हाल है

मैं नहीं मानता कि किसी विधा को किसी विशेष भाव के लिये रूढ़ हो जाना चाहिये। कोई भी विधा किसी भी कथ्य की संवाहिका हो सकती है।

— तुम्हारा ये प्रश्न उचित नहीं है ग़ज़ल आज हिन्दी में भी उतनी ही लोकप्रिय है जितनी उर्दू में, तमाम पत्रिकायें ग़ज़लें प्रकाशित करती हैं। कभी 'गंगा' पत्रिका में कमलेश्वर ने ज्ञान प्रकाश विवेक और मेरी ग़ज़लें बतौर संपादकीय प्रकाशित की थी शायद तुमने वे अंक देखे हों। जहाँ तक मंच का प्रश्न है अधिकांश कवि गीतकार, ग़ज़ल लिख रहे हैं हाँ हिन्दी के महाधीश समीक्षक जरूर हिन्दी ग़ज़ल के साथ सौतेला व्यवहार कर रहे हैं।

— मैंने प्रेम पर ग़ज़ल लिखने का कार्य अपने समकालीन कवि मित्रों पर छोड़ दिया है। उनमें एक तुम भी हो।
जहाँ तक हिन्दी साहित्य में महत्व न मिलने का प्रश्न है उसके लिये मैं क्या कर सकता हूँ। वैसे मैं संतुष्ट हूँ कि देश के हजारों पाठक और श्रोता पत्र लिखते हैं और अब तो तुम्हारे जैसी युवा प्रतिभायें शोध भी कर रही हैं फिर एक किसान कवि को जिसके एक हाथ में हल की मुठिया दूसरे में कलम हो और कौन महत्व चाहिये।

3

□ अदम गोंडवी
ग्राम: परसपुर
गोंडा (उ०प्र०)

(15)

बहन मीनू मिनेश,

आशीर्वाद!

मैं स्वयं मेरे परिजन एवम तमाम मित्र बहुत खुश हैं। उस खुशी को शब्दों में व्यक्त करना मेरे लिये मुश्किल है। भाषा भावों को व्यक्त करने का सबसे गरीब माध्यम है इसके बावजूद हम रचनाकारों के पास वही एक संबल है अतः कुछ न कुछ तो लिखना ही है। हिन्दी के दिवंगत वरिष्ठ कवि गोरख पांडे मेरे मित्र थे उनके साथ नर्मदा होस्टल के कमरा नं० 15 में कई रातें जागकर गुजारी हैं। उस समय जे.एन.यू. प्रवास मेरे लिये तीर्थयात्रा जैसा पावन था। हर क्षण साहित्य चर्चा न खाने की परवाह न सोने की लगता है मेरी वह साधना आज सफल हो रही है तुम्हारे कार्य के रूप में। यह वह दौर था जब दिल्ली के कुछ कवियों ने यह बहस छेड़ रखी थी कि कविता सरल होनी चाहिये या जटिल। कविता सरल होनी ही चाहिये इसके पक्ष में पांडे जी के कुछ लेख वर्तमान साहित्य के कुछ अंकों में छपे थे। और आज जब दिल्ली उत्तर आधुनिकता के मोह में आकंठ डूबी है तुमने उस कवि की ग़ज़लों को आलोचनात्मक अध्ययन के लिये चुना है जिसके एक हाथ में कलम दूसरे में हल की मुठिया है आमीन।

V

मैं मौखिक परम्परा का कवि हूँ जिस परम्परा के आलोचक डॉ० नामवर सिंह हैं

खैर छोड़िये मैं मौखिक परम्परा दूसरे अर्थ में कह रहा था अपनी रचना प्रक्रिया को लेकर गज़ल मेरी स्मृति में धीरे-धीरे उभरती है बाद में मैं उसे नोट कर लेता हूँ। मेरी औपचारिक शिक्षा सिर्फ प्रायमरी यानी कक्षा 5 तक की है जिसे साक्षर कहा जा सकता है। तुमने मेरी गज़लों को शोध के लिए चुन कर पढ़े लिखों की जमात में शामिल कर लिया धन्यवाद। हमारे गोंडा के बुद्धिजीवी कितने खुश हैं इसका अंदाज़ा 'दैनिक हिन्दुस्तान' की खबर से लगालें जिसकी कतरन भेज रहा हूँ। इस बार इतना ही।

आदरणीय डॉ० साहब को प्रणाम परिवार को यथायोग्य पुनः आशीर्वाद।

सद्भावी
अदम गोंडवी

अब अदम गोण्डवी की रचनाओं पर होगा शोध

हिन्दुस्तान 8 मार्च लखनऊ

गोण्डा कार्यालय

गोण्डा, ७ मार्च। हिन्दी ग़ज़लों के महान रचनाकार दुष्यंत कुमार की रचना धर्मिता को नया आयाम देने वाले हिन्दी ग़ज़ल के सशक्त हस्ताक्षर रामनाथ सिंह 'अदम' की ग़ज़लों पर शोध प्रारम्भ हो गया है। अदम गोण्डवी की इस उपलब्धि पर प्रतिष्ठित संस्था 'सर्जना' द्वारा अप्रैल ९७ में इस रचनाकार का अभिनंदन किया जायेगा।

प्राप्त जानकारी के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय की शोध छात्रा मीनू शर्मा १६, गंगा हास्टल जे.एन.यू. ने अदम की हिन्दी ग़ज़लों पर शोध प्रारम्भ कर दिया है। इनके शोध का विषय है 'अदम गोण्डवी की ग़ज़लों का आलोचनात्मक अध्ययन।' कु. शर्मा यह शोध विश्वविद्यालय के हिन्दी प्राध्यापक डा. गोविन्द प्रसाद के निर्देशन में कर रही हैं।

श्री अदम की ग़ज़लों का संकलन 'धरती की सतह पर' मुक्ति प्रकाशन नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित हो चुका है। दूसरा महत्वपूर्ण संकलन भी शीघ्र आने वाला है। 'अदम गोण्डवी' की ग़ज़लों पर शोध का समाचार पाकर यहां की जनता में खुशी की लहर दौड़ गई है। गोण्डा के अनेक कवियों व शायरों डा. जगन्नाथ त्रिपाठी, कलीम कैसर, अवनीन्द्र मिश्र 'विनोद' उमाशंकर शुक्ल 'आलोक', कृष्णनन्दन 'नन्दन', जे.पी. आर्य 'निर्मल', सुरेन्द्र बहादुर सिंह 'झंझट', नियाज अहमद 'सहर' सुरेश 'मोकलपुरी' व नारायण जी शुक्ल ने उन्हें बधाइयां दी हैं।

साहित्यकारों के अतिरिक्त डा. छोटेलाल दीक्षित प्राचार्य शास्त्री महाविद्यालय गोण्डा, डा. शैलेन्द्र मिश्र, एस.पी. मिश्रा, बाबूराम तिवारी, रवीन्द्र कुमार श्रीवास्तव दीनानाथ त्रिपाठी, सुरेश चन्द्र त्रिपाठी, का. टीकमदत्त शुक्ल, डा. गुलाम रब्बानी, सुरेन्द्र दत्त राम पाण्डेय प्रधानाचार्य श्री गांधी विद्या मंदिर इण्टर कालेज, गोण्डा, वंशीधर द्विवेदी अध्यक्ष माध्यमिक शिक्षक संघ व विद्या शरण शर्मा तथा एस.एन. चतुर्वेदी प्रवक्तागण का. आजम सरदार भगत सिंह इण्टर कालेज, गोण्डा आदि अनेक बुद्धिजीवियों ने भी इस उपलब्धि का स्वागत किया है।

"आज के कवि सोचते कम लिखते ज्यादा हैं"

व्यवस्थागत चूकों को गजह से समाज मे व्याप्त निर्ममता और नृशमता को अपने गीतों और गजलों के जरिये सामने लाकर परिष्कृत जनवादी सोच को विकसित करना और अपने कवि कर्म को जनांदोलनों का औजार बना देना किसी भी कवि, शायर या गीतकार की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है। कवि कर्म से जुड़े एक ऐसे ही व्यक्ति का नाम है। रामनाथ सिंह अदम यानि अदम गोडवी। गोण्डा जनपद के एक गांव में खेती किसानी के साथ-साथ रचना धर्म को जारी रखे हुए अदम जी की ग्रामीण सरलता में पूंजीवाद के सांस्कृतिक असर का रत्तीमात्र समावेश नहीं है। उनके गीतों और गजलों में उनका जीवन संघर्ष साफ दिखायी देता है। साधारण जीवन से संवेदित, आदमी के अतीत-वर्तमान, राग-अनुराग की वैविध्यपूर्ण सामग्री उनकी रचनाओं के विषय वस्तु हैं। वह अपने गीतों और गजलों में जहां मानवीय पीड़ा का स्पष्ट रेखांकन करते हैं, वहीं इसके लिए दोषी कारणों का उल्लेख करते हुए निदान भी बताते हैं। आज की ज्वलंत समस्या साम्प्रदायिकता पर उन्होंने लिखा कि ..**हिन्दू या मुस्लिम के अहसासात को मत छेड़िये। अपनी कुर्सी के लिए जज़्बात को मत छेड़िये।** यही नहीं अदम जी की रचनाओं में एक प्रक्रिया भी होती है, जिसमें वैचारिक सघनता के साथ-साथ पाठकों के लिए बोधगम्य और सहज ग्राह्य होती है। वैचारिक लोप और आपाधापी के इस त्रासद दौर में भी अदम जी की एक-एक रचना गम्भीर बहस को न्यौता देती है। पिछले दिनों लखनऊ में एक कार्यक्रम के दौरान उनसे बातचीत चल निकली। अपने लोगों में 'दादा' के सम्बोधन से लोकप्रिय अदम गोडवी से 'राष्ट्रीय सहारा' के **मनोरंजन सिंह** की बातचीत का सम्पादित अंश

☐ जनवादी गीतों की वर्तमान स्थिति क्या है? क्या अब जनवादी रचनाओं की कमी नहीं दिखती?

☺ ऐसा नहीं है कि जनवादी रचनाएं कम आ रही हैं। खूब लिखा जा रहा है, लेकिन इसका खतरनाक पक्ष यह है कि जिस उद्देश्य से जनवादी रचनाएं होती हैं उसका प्रचार-प्रसार का माध्यम बहुत कमजोर पड़ता जा रहा है। जरूरत इस बात की है कि आम आदमी की पीड़ा से दुःखी कोई व्यक्ति हो या रचनाधर्मी उसे लोगों के बीच जाना चाहिए इसके लिए तैयार उसे करना होगा। तभी जनवादी रचनाओं का उद्देश्य पूरा होगा।

☐ आपने गीतों और गजलों से रूमानियत को दूर रखकर, उसे एक अलग तरह की पहचान दी है, क्या आपको लगता है कि मौजूदा समय में काव्य रचनाओं का उद्देश्य सही मायने में पूरा हो रहा है?

☺ देखिये, इस समय कविताएं केवल और केवल रोमानी आ रही है, ऐसी बात नहीं। हां यह जरूर है कि बहुतायत में ऐसी गजलें, गीत और कविताएं आ रही हैं, जिनका समाज से सरोकार थोड़ा कम है। इस तरह पहले भी होता रहा है। कविताएं बहुत लिखी जा रही हैं। स्वाभाविक है जब अधिक लिखी जाएंगी, तो कूड़ा-करकट भी आयेगा। दुर्भाग्य यह है कि अधिसंख्य कवि सोचते कम हैं और लिखते ज्यादा हैं।

☐ कवि और कविता का मूलधर्म क्या होना चाहिए?

☺ जहां तक मेरा मानना है कवि अपने देश की जिन परिस्थितियों में पैदा होता है, पलता है, बढ़ता है, उसे अपनी रचना में समाहित कर श्रोताओं और पाठकों के सामने रखता है। यहां सवाल यह है कि उसकी संवेदना कहां और किन कारणों से आहत हुई है और तय मानिये कविताओं या किसी भी रचना के पीछे रचनाकार की सोच और संवेदना दोनों स्पष्टतः दिखती है। जहां तक कविता के मूलधर्म की बात है, तो जो तबाही आप देख रहे हैं उसके प्रति यदि लेखक या कवि संवेदन शून्य हो जायेगा तो समाज का क्या होगा, जरूरत है अपने रचनाधर्म में इसके पहल की। जिस दिन रचनाधर्मी सामाजिक सरोकारों से मुंह मोड़ लेंगे उस दिन स्थिति और भयावह हो जाएगी।

☐ आपने सामाजिक सरोकारों को आत्मसात कर जिस तरह से गीतों और गजलों के माध्यम से लोगों को सचेत करने और कुरीतियों के खिलाफ जनांदोलन खड़ा करने की कोशिश की है, यदि सब के सब रचनाधर्मी यही करने लगें, तो क्या सब कुछ एक पक्षीय नहीं हो जाएगा?

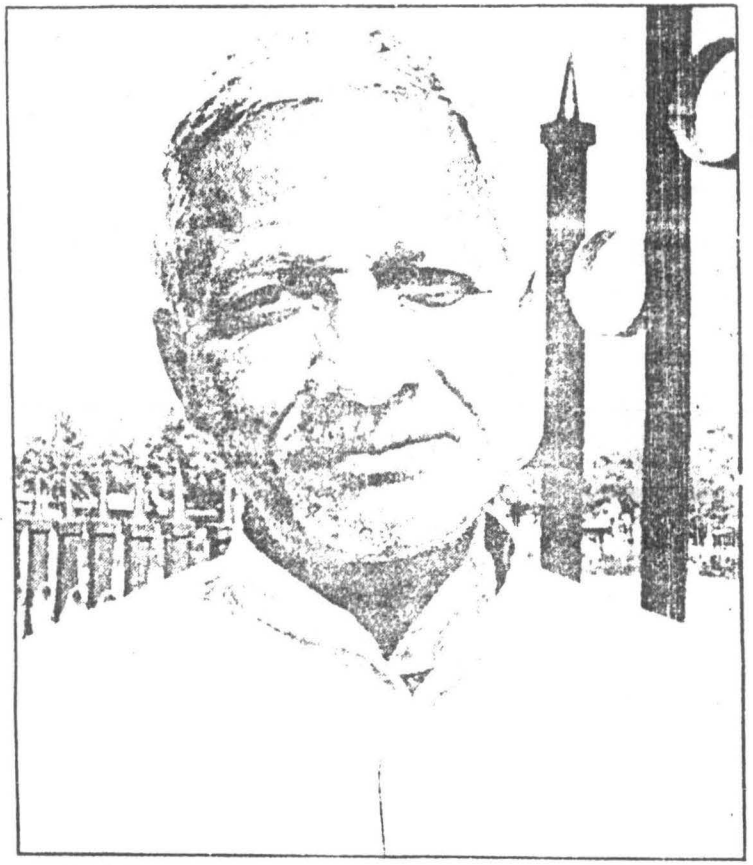

☺ पहले तो यह संभव ही नहीं है कि दुनिया के सारे रचनाधर्मी एक सोच के हो जायें, [illegible] नहीं लगता कि सामाजिक सरोकारों से अलग हटकर कुछ बेहतर हो ही नहीं सकता। जरूरत इस बात की है कि आम आदमी की पीड़ा को हम व्यवस्था चलाने वालों तक कितनी बेबाकी और साफगोई से ले जाते हैं और निश्चित तौर पर कविता का उद्देश्य तभी पूरा होता है जब आपकी बातें हर एक की जुबान से सामने आने लगती हैं। किसी भी साहित्य या रचना का [illegible] आदमी ही होता है और आदमी को उसकी [illegible] की लड़ाई में हौसला आफजाई करने और नयी राह दिखाने में आप सफल हों यही आपकी गजलों, गीतों और कविताओं का मानदण्ड होना चाहिए।

☐ कवियों की नयी खेप मे आपको क्या संभावनाएं दिख रही हैं?

☺ हमारे युवा कवि बहुत ही संवेदनशील और कलम के धनी हैं। इस क्रम में मैं बीकापुर (फैजाबाद) के जमुना प्रसाद उपाध्याय, प्रतापगढ़ के बौरम प्रतापगढ़ी और मऊ के राघवेन्द्र प्रताप का नाम लेना चाहता हूं। इन जनकवियों में अपार संभावनाएं हैं और मुझे विश्वास है कि देश में ऐसे कवियों की कमी नहीं है जो कविता की शर्त पर जनांदोलनों को खड़ा कर सकते हैं और एक नयी बहस का माहौल तैयार कर सकते हैं।

वैसे तमाम ऐसे कार्यक्रम आयोजित होने चाहिए जिसमें रचना संसार के हर कोने का प्रतिनिधित्व हो। संगोष्ठी, चित्र और पोस्टर प्रदर्शनी और बहस के जरिये समाज और व्यवस्था में व्याप्त बुराइयों को रेखांकित किया जाये। ऐसे आयोजनों को व्यापक बनाकर तमाम संवेदनशील लोगों की सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिए। यदि ऐसा नहीं हुआ तो जिस आजाद भारत की बात हम कर रहे हैं वह सब कुछ बेमानी साबित हो जाएगा।

☐ मौजूदा राजनीति से कहां तक सहमत और कहां तक असहमत हैं?

☺ आज की जो राजनीति है उससे सहमत होने का सवाल ही नहीं उठता। एक ऐसी व्यवस्था जिसमें आप ठीक ढंग से सांस भी न ले सकें और चारों तरफ के माहौल से हमेशा दम घुटता हो, इससे कैसे सहमत हुआ जा सकता है। भूख, बेरोजगारी, आबरू की सुरक्षा और शिक्षा जैसी तमाम गम्भीर बातें हैं जिस पर कोई सार्थक पहल हो ही नहीं रही है। जाति, सम्प्रदाय और मसल पावर के बूते व्यवस्था अपने हाथों में लेकर राज करने वालों से बहुत उम्मीद भी नहीं की जा सकती। एक ऐसी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था की बात होनी चाहिए जिसमें सबको न्याय, रोटी, कपड़ा मकान और रोजगार मिले।

☐ तो क्या इसके लिए [illegible] या इसके बाहर के लोग ही इसके लिए जिम्मेदार हैं, जनता का दोष कुछ भी नहीं?

☺ [illegible] भी दोषी [illegible] विकल्पहीनता की स्थिति है। जिस देश में [illegible] फीसदी [illegible] और [illegible] राजनैतिक [illegible] उनके बारे [illegible] कि वे सब कुछ जानबूझकर ऐसा करते [illegible] जरूरत इस बात की है [illegible] और देश के [illegible] और रोटी मिले।

☐ आज तमाम ऐसे मुद्दे हैं [illegible] पर राष्ट्रीय सहमति की जरूरत है। [illegible] ऐसे मुद्दे हैं जो आजादी के पहले [illegible] हमारे बीच हैं, लेकिन क्या कारण है इस पर आप सहमति या सफलता [illegible] नहीं पा रही है?

☺ [illegible] यह एक ऐसा [illegible] जरूरत इस बात की है कि [illegible] प्रयास से कुछ भी नहीं होगा।

☐ अंत में एक सवाल यह कि आपकी लेखनी बंद है या..

☺ [illegible]

क [illegible]विता की अपनी एक भाषा होती है। उस भाषा में उसका दर्द, [illegible] और आसपास का सामाजिक वातावरण प्रतिबिम्बित होता है लेकिन जब यही कविता अपनी शक्ल को [illegible]

मगर ये आंकड़े झूठे हैं ये दावा किताबी है, उधर जम्हूरियत का ढोल पीटे जा रहे हैं वो, उधर पर्दे के पीछे बर्बरियत है, [illegible] है, लगी है होड़ सी देखो अमीरी औ' गरीबी में ये [illegible]